अपनी बात

आचरण के पूर्व ज्ञान आवश्यक है। भगवान महावीर ने कहा–"पढम नाण तओ दया" पहले ज्ञान फिर आचरण। सम्यक् ज्ञान के प्रचार–प्रसार हेतु समता युवा सघ, बीकानेर ने साहित्य प्रकाशन के क्षेत्र में भी कदम बढाये हैं। 'तत्त्व का ताला ज्ञान की कुन्जी" पुस्तक प्रकाशन इसी उद्देश्य की सफलता हेतु एक और कदम है। प्रस्तुत पुस्तक समीक्षण ध्यान योगी, समता विभूति आचार्य श्री नानेश के बीकानेर शुभागमन, 21 ऐतिहासिक दीक्षा प्रसग एवं आगम रहस्य ज्ञाता युवाचार्य श्री रामलाल जी म सा के युवाचार्य चादर प्रदान दिवस के पावन प्रसग पर प्रकाशित कर श्री समता युवा सघ बीकानेर अत्यन्त आल्हादित है।

अर्थसहयोगी श्रीयुत् कमलचन्द सरला बच्छावत के सौजन्य से तत्व का ताला ज्ञान की कुन्जी का द्वितीय सस्करण का प्रकाशन किया जा रहा है इसके लिए सघ आपका आभारी है।

ज्ञातव्य रहे पूर्व मे इस पुस्तक का प्रकाशन अ भा समता युवा सघ रतलाम द्वारा किया गया था। समता युवा सघ, बीकानेर द्वारा पूर्व मे भी **समता स्वाध्याय सौरभ भाग–1, समता स्वाध्याय सौरभ भाग–2, समता सरिता** का प्रकाशन किया जा चुका है।

पुस्तक के सकलन सम्पादन मे पूरी तरह से सावधानी बरती गई है इसके उपरात भी त्रुटि रहना स्वाभाविक है सुज्ञ-पाठक सुधारकर ज्ञानार्जन मे वृद्धि करेंगे ऐसी आशा है।

दिनांक 7–3–92

इन्द्रचन्द दुगड़

अनुक्रमणिका

सामान्य तत्वज्ञान

विशेष तत्त्वज्ञान

卐 सामान्य तत्वज्ञान 卐

अध्यात्म पाठ

धम्मो मगलमुक्किट्ठ, अहिसा सजमो तवो ।
देवा वि त नमसति, जस्स धम्मे सयामणो ।। 1 ।।

धर्म सर्वोत्तम मगल है । अहिंसा, सयम और तप धर्म है । जिनका मन सदा धर्म मे लगा रहता है, उनको देवता भी नमस्कार करते हैं ।। 1 ।।

अप्पा नई वेयरणी, अप्पा मे कूडसामली ।
अप्पा कामदुहा घेणू, अप्पा मे नन्दण वण ।। 2 ।।

यह आत्मा खुद ही नरक की वैतरणी नदी और कूट शाल्मली वृक्ष के समान दु खदायी है, और इच्छित वस्तु देने वाली कामधेनु और नन्दन वन के समान सुखदायी है ।। 2 ।।

अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य ।
अप्पा मित्तममित्त च, दुप्पट्ठिय सुपट्ठिओ ।। 3 ।।

यह आत्मा ही अपने सुख दुख का कर्ता और विकर्ता भोक्ता है, और यह आत्मा सुमार्ग पर रहने पर अपना मित्र और कुमार्ग पर रहने पर अपना ही शत्रु होता है ।। 3 ।।

अप्पा चेव दमेयव्वो, अप्पा हु खलु दुद्दमो ।
अप्पादन्तो सुही होई, अस्सि लोए परत्थय ।। 4 ।।

अपनी आत्मा को ही दमन करना चाहिये, आत्मा दुर्दमनीय है। आत्मा का दमन करने वाला ही इस लोक और परलोक मे सुखी होता है। ।। 4 ।।

पंचिदियाणि कोह् माण माय तहेव लोह् य ।
दुज्जय चेव अप्पाण, सव्वमप्पे जिए जिय ।। 5 ।।

पाचो इन्द्रियो के विषय, क्रोध, मान, माया, लोभ और आत्मा दुर्जय हैं। आत्मा को जीत लेने पर इन सब को जीत लिया होता है ।।5।।

जो सहस्स सहस्साण, सगामे दुज्जए जिए ।
एग जिणेज्ज अप्पाण, एस से परमोजओ ।। 6 ।।

दस लाख योद्धाओ को दुर्जय सग्राम मे जो जीन लेता है, उस से भी अधिक विजयी वह है जो अपने आपको जीत लेता है ।।6।।

जय चरे जय चिट्ठे जयमासे जय सए ।
जय भु जन्तो भासन्तो, पावकम्म, न बधइ ।। 7 ।।

सावधानी (यत्न) से चले, खडा रहे, बैठे, सोवे, भोजन करे और बोले तो पापकर्म का बन्ध नही होता है ।।7।।

लाभालाभे सुहे दुक्खे, जीविए मरणे तहा ।
समो निंदापससासु, तहा माणावमाणओ ।। 8 ।।

लाभ मे या हानि में, सुख मे या दु ख मे, जीवित रहने या मरने मे, निन्दा या प्रशसा किये जाने पर और मान या अपमान किये जाने पर समभाव रखे ।।8।।

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमतु मे ।
मित्ती मे सव्व भूएसु, वेर मज्झ न केणई ।। 9 ।।

मैं सब जीवो को क्षमा करता हू सब जीव मुझे क्षमा करते हैं, मेरी सब जीवो के साथ मित्रता है, किसी के साथ मुझे वैर नही हैं ।।9।।

मार्गानुसारी के 35 गुण

साधारणतया पूर्वाचार्यों ने सम्यक्त्व प्राप्ति की सुलभता उन मनुष्यो मे मानी है कि जिनका गृहस्थ जीवन अनिन्दनीय हो। इस प्रकार की दशा को 'मार्गानुसारिता' के नाम से बताया गया है मार्गानुसारी के 35 गुण इस प्रकार बताये गये हैं।

1— न्याय सम्पन्न विभव–जिसकी आजीविका के साधन, न्याय के अनुकूल तथा सच्चाई से युक्त हो।

2— शिष्टाचार प्रशसक–जिसका आचरण उत्तम लोग करते है, उन आचार की प्रशसा करना। लोकापवाद से डरना, दुखियो की सेवा करना।

3— समान कुल–शील वाले अन्य गोत्रिय के साथ विवाह सम्बन्ध करना।

4— पाप भीरु–पाप जनक कार्यो से डरकर अलग रहना।

5— प्रसिद्ध देशाचार का पालक–खान, पान, वेशभूषा, भाषा आदि का पालन, अपने देश के उत्तम व्यक्तियो द्वारा मान्य हो वैसा ही करना।

6— अवर्णवाद त्याग–पर निन्दा का त्यागी होना।

7— घर की व्यवस्था–रहने के लिए घर ऐसा हो कि जिसमे चोरो अथवा दुराचारियो का प्रवेश सुगम नही हो सके। पडोसी भी भले और उत्तम हो।

8—सत्सग–भले और सदाचारियो की सगति करना और दुराचारियो से दूर रहना ।

9—माता-पिता की सेवा करना-यह सबसे पहला सदाचार है ।

10—उपद्रव युक्त स्थान का त्याग करना ।

11—घृणित-निन्दनीय कृत्य नही करना ।

12—आय के अनुसार व्यय करे अर्थात आमदनी से अधिक खर्च नही करना ।

13—अपना वेश, देश, काल और अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार रखना ।

14—बुद्धिमान होना ।

15—प्रतिदिन धर्म श्रवण करना ।

16—अजीर्ण होने पर भोजन नही करना ।

17—यथासमय भोजन करना ।

18—अबाधित त्रिवर्ग साधन—अर्थ और काम की इस प्रकार साधना नही करे जिससे कि धर्म बाधित हो ।

19—साधु और दीन अनाथो को दान देना ।

20—दुराग्रह से रहित होना ।

21—गुण पक्षपात-गुणवानो, सदाचारियो, धर्मीजनो और सज्जनो तथा अहिंसा, सत्यादि सद्‌गुणो का पक्ष करना ।

22—निषिद्ध देशादि मे नही जाना ।

23—अपनी शक्ति को तोल कर कार्य मे प्रवृत्ति करना ।

24—वृत्तस्थ ज्ञानवृद्धो की पूजा ।

25—पोष्य पोषक–माता, पिता, पत्नी, पुत्रादि और आश्रित जनो का पोषण करना ।

26—दीर्घदर्शी-दूरदर्शितापूर्वक, भावी हानि-लाभ का विचार कर के कार्य करना ।

27—विशेषज्ञ-अपना ज्ञान बढा कर कार्य-अकार्य एव हेय उपादेय के विषय में अनुभव वढाना ।

28—कृतज्ञ-अपने पर किये हुए उपकारो को सदा याद रख कर उनका आभार मानते रहना ।

29—लोकवल्लभ-विनय, सेवा, सहायतादि से लोक-प्रिय होना ।

30—लज्जशील-लज्जावान् होना ।

31—सहृदय -दु:खी प्राणियो के दु ख देखकर हृदय का कोमल होना और उनके दु ख दूर करने का यथाशक्ति प्रयत्न करना ।

32—सौम्य–सदैव शान्त स्वभाव और प्रसन्न रहना ।

33—परोपकार कर्मठ-दूसरो की भलाई मे सदैव तत्पर रहना ।

34—क्रोध, लोभ, मद, मान, काम और हर्ष-इन छ: अन्तरग शत्रुओ का यथा–सभव त्याग करना ।

35—इन्द्रिय जय-इन्द्रियो पर यथाशक्ति अकुश रखना ।

प्राथमिक प्रश्नोत्तर

प्रश्न	उत्तर
1 अरिहन्त कौन है ?	1 चार घनघाति कर्मो को नष्ट करने वाले परम वीतराग सर्वज्ञ सर्वदर्शी ।

2 सिद्ध	कौन है ?	2 जिनके समस्त प्रयोजन सिद्ध हो चुके हो, ऐसे मोक्ष प्राप्त परमेश्वर।
3 वीतराग	" "	3 जिनके राग-द्वेप नष्ट हो चुके।
4 भगवत	" "	4 भव-भ्रमण (जन्म-मरण) का अन्त करने वाले।
5 शूरवीर	" "	5 जो उत्पन्न परीषह (उपद्रव विपत्ति) को सहन करें।
6 श्रमण	" "	6 सयम और तप मे श्रम करे, विपय-वासना का शमन करे और समभाव युक्त रहे।
7 निर्ग्रंथ	" "	7 कनक और कामिनी के त्यागी परिग्रह के सर्वथा त्यागी।
8 भिक्षु	" "	8 निर्दोप भिक्षा करने वाले।
9 अनगार	" "	9 जिन्होने अपने घर का त्याग कर दिया हो।
10 यति	" "	10 इन्द्रियो को वश मे रखने वाले।
11 मुनि	कौन है ?	11 अधर्म के कार्योमे मौन रहने वाले।
12 पडित	" "	12 पाप से डरने वाले।
13 ऋषीश्वर	" "	13 समस्त जीवो के रक्षक।
14 योगीश्वर	" "	14 जो मन, वचन और काया के योगो को वश मे रखे।
15 दयालु	" "	15 दु खी जीवो पर दया करे।

16 दानेश्वर कौन है ?	16 अभय और सुपात्र दान देने मे उदार हृदय।
17 ब्रह्मचारी " "	17 नव वाड़ युक्त ब्रह्मचर्य पाले।
18 साधु " "	18 आत्म हित की साधना करे।
19 स्थविर " "	19 स्व पर को धर्म मे स्थिर करे।
20 गणधर " "	20 गण एव गुणो को धारण करे
21 पुत्र " "	21 माता-पिता का आज्ञाकारी हो।
22 शिष्य " "	22 गुरु की आज्ञा का पालन करे।
23 भार्या " "	23 गृह व्यवस्था के भार का वहन करे।
24 मित्र " "	24 दु ख-सुख मे पूर्ण रूप से साथ देने वाला।
25 तपस्वी " "	25 आत्मा के लगे कर्मों की निर्जरा के लिए तप करने वाला।
26 जैनी " "	26 जिनेश्वर भगवंत का उपासक
27 श्रावक " "	27 जिनवाणी सुनने का रसिक।
28 श्रमणोपासक " "	28 निर्ग्रंथ-श्रमणो की उपासना करने वाला।
29 व्रती कौन है ?	29 पापो का त्याग करने वाला।
30 मार्गानुसारी कौन है ?	30 सदाचार का पालन करने वाला।

श्रावक का वचन व्यवहार

श्रमणोपासक का वचन व्यवहार उत्तम प्रकार का होता है इसके आठ नियम इस प्रकार है :—

1 श्रावकजी थोडा बोले ।
2 ,, आवश्यकता होने पर बोले ।
3 ,, मीठा बोले ।
4 ,, चतुराई पूर्वक (अवसर के अनुसार) बोले ।
5 ,, अहकार रहित वचन बोले ।
6 ,, मर्म खोलने वाला (एव आघात-जनक) वचन नही बोले ।
7 ,, सूत्र सिद्धांत के न्याययुक्त बोले ।
8 ,, सभी जीवो के लिए हितकारक वचन बोले ।

श्रावकजी के 21 गुण

जिनेश्वर भगवंत के प्रियधर्मी-दृढधर्मी उपासक में नीचे लिखे 21 गुण होते हैं :—

1 श्रावकजी नव तत्व और पच्चीस क्रिया के जानकार होवे ।
2 " धर्म आराधना मे किसी की सहायता की इच्छा नही करे ।
3 " धर्म पर दृढ रहे । यदि कोई धर्म से डिगाना चाहे, तो डिगे नही ।
4 " श्री जिन धर्म मे शका नही करे, परदर्शन की इच्छा नही करे और करनी के फल मे सन्देह नही लावे ।
5 " सूत्र और अर्थ दोनो को प्राप्त करने वाले, ग्रहण करने वाले, पूछ कर निश्चित करने वाले और रहस्य ज्ञान प्राप्त करने वाले होवे ।
6 " की धर्मरुचि इतनी गहरी हो कि जिसका प्रभाव,

रक्त और मास पर ही नही, हड्डिये और मज्जा तक मे व्याप्त हो जाय ।

7 श्रावकजी निर्ग्रंथ–प्रवचन ही सार है, अर्थ है और परमार्थ है शेप सभी बातें, सभी वस्तुए और सभी सयोग अनर्थ है । ऐसी दृढ श्रद्धा रखे और धर्म-बन्धुओ मे चर्चा करे ।

8 " कूड कपट, ठगाई, अन्याय, अनीति एव अनाचार से दूर रह कर अपना जीवन एव आजीविका न्याय, नीति, सदाचार और धर्म-साधना से निर्मल एव स्वच्छ रखे ।

9 श्रावकजी दान के लिए अपने घर के द्वार खुले रखे ।

10 " प्रति मास दोनो पक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा और अमावस्या, इस प्रकार छह् पोपध करे ।

11 " के सदाचार की प्रतिष्ठा इतनी व्याप्त हो कि यदि वे धन से भरे हुए भडारो और महिलाओ के निवास–अ त पुर (राजाओ के रनवास) मे भी चले जायँ तो उन पर किसी प्रकार की शका नही हो, उनका विश्वास हो ।

12 " अपने व्रत नियमो का निर्दोप रीति से पालन करे ।

13 " श्रमण-निर्ग्रंथो को भक्तिपूर्वक निर्दोप आहारादि का दान करे ।

14 " धर्म का प्रचार करे । वक्तव्य, लेखन, भाषण आदि से धर्म की वृद्धि करे ।

15 " अल्प इच्छा वाले होवें । लोभ को वश मे रखे ।

16 श्रावकजी अल्प आरम्भ वाले होवे ।
17 " प्रतिदिन तीन मनोरथ का चिन्तन करे ।
18 " गुणवान साधु. साध्वी, श्रावक और श्राविका की प्रशसा करे ।
19 " उभयकाल प्रतिक्रमण करे ।
20 " साधर्मी भाई बहिनो की सहायता करे ।
21 " नित्य सामायिक करे, धर्मोपदेश सुने ।

(भगवती सूत्र श 2 उ 5)

अनमोल शिक्षा

(1) दीजे दान, (2) लीजे यश, (3) कीजे परोपकार, (4) खाइजे गम, (5) पीजे प्रेम-रस, (6) पालजे शील, (7) टालजे कुसगत, (8) छोडजे पाप, (9) आदरजे धर्म, (10) ध्याइजे अरिहन्त देव, (11) सेवजे निर्ग्रन्थ गुरु और (12) रमजे स्वाध्याय ध्यान मे ।

मूल

जिससे वस्तु की तथा गुण या दोष की उत्पत्ति हो, उसे 'मूल' कहते हैं। मूल ही विकसित होकर फल बनता है—

(1) समस्त गुणो का मूल विनय है, (2) सभी रसो का मूल पानी है, (3) सभी पापो का मूल लोभ है, (4) सभी धर्मो का मूल दया है, (5) सभी कलह का मूल हसी है, (6) सभी रोगो का मूल अजीर्ण है, (7) सभी प्रकार के मरण का मूल शरीर है, (8) सभी बन्धनो का मूल स्नेह हैं।

नहीं

1 क्रोध के समान विष नही। 2 क्षमा के समान अमृत नही।
3 पाप के समान वैरी नही। 4 धर्म के समान मित्र नही।
5 कुशील के समान भय नही। 6 शील के समान शरणभूत नही।
7 लोभ के समान दु.ख नही। 8 सतोष के समान सुख नही।

शृंगार

1 शरीर का शृगार शील 2 शील का शृगार तप
3 तप का " क्षमा 4 क्षमा का " ज्ञान
5 ज्ञान का " मौन 6 मौन का " शुभ ध्यान
7 शुभ ध्यानका " सवर 8 सवर का " निर्जरा
9 निर्जरा का " केवल ज्ञान 10 केवल ज्ञान " अक्रिया
11 अक्रिया का " मोक्ष और 12 मोक्ष का " अव्याबाध सुख

महा पापी

1 आत्म-घाती महापापी
2 विश्वास-घाती "
3 गुरु-द्रोही "
4 कृतघ्नी "
5 झूठी सलाह देने वाला "
6 झूटी साक्षी देने वाला "
7 हिंसा मे धर्म बताने वाला "
8 सरोवर की पाल तोडने वाला "
9 दव लगाने वाला

10 हराभरा वन कटाने वाला महापापी
11 वाल-हत्या करने वाला "
12 सती-साध्वी का शील-भग करने वाला "

ज्ञान हानि के सात कारण

[1] आलस्य करे तो ज्ञान घटे ।
[2] निद्रा अधिक लेवे तो ज्ञान घटे ।
[3] क्लेश करे तो ज्ञान घटे ।
[4] शोक करे तो ज्ञान घटे ।
[5] चिन्ता अधिक करे तो ज्ञान घटे ।
[6] शरीर मे रोग अधिक रहे तो ज्ञान घटे ।
[7] कुटुम्ब परिवार के मोह मे डूबा रहे तो ज्ञान घटे ।

ज्ञान वृद्धि के 11 कारण

[1] उद्यम करे तो ज्ञान वढे ।
[2] निद्रा तजे तो ज्ञान वढे ।
[3] ऊनोदरी तप करें तो ज्ञान वढे ।
[4] अल्प वोले तो ज्ञान वढे ।
[5] पडित पुरुषों की सगति करे तो ज्ञान वढे ।
[6] विनय करे तो ज्ञान वढे ।
[7] माया कपट रहित तप करे तो ज्ञान वढे ।
[8] ससार असार जाने तो ज्ञान वढे ।
[9] सिखे हुए ज्ञान को वारम्वार चितारे तो ज्ञान वढे ।
[10] ज्ञानवंत के पास ज्ञान सीखे तो ज्ञान वढे ।
[11] पाचो इन्द्रियो के विपयो को त्यागे तो ज्ञान वढे ।

शिक्षा शील के आठ गुण

1—हास्य क्रीडा न करे ।

2—इन्द्रियो को वश मे रखने का अभ्यास करें ।

3—किसी के मर्म तथा दोषो को प्रकट न करे ।

4—सदाचार का ध्यान रखे ।

5—अनाचार का सेवन न करे ।

6—रसना लोलुपी न हो ।

7—क्रोध से सदा दूर रहे ।

8—सत्य बात को स्वीकार करने मे सदा तत्पर रहे ।

तीर्थंकर पद प्राप्ति के 20 बोल

1—अरिहन्त भगवान की भक्ति, उनके गुणो का चिन्तन और आज्ञा का पालन करते रहने से उत्कृष्ट रस जमे, तो तीर्थंकर नाम-कर्म का बन्ध होता है ।

2—सिद्ध भगवान् की भक्ति और उनके गुणों का चिन्तन करने से ।

3—निर्ग्रंथ-प्रवचन रूप श्रुतज्ञान मे अनन्य उपयोग रखने से ।

4—गुरु महाराज की भक्ति, आहारादि द्वारा सेवा और उनके गुणो का प्रकाशन करने एवं आशातना टालने से ।

5—जाति-स्थविर [60 वर्ष की वय वाले] श्रुत-स्थविर [स्थानाग समवायाग के धारक] प्रव्रज्या-स्थविर [20 वर्ष की दीक्षा-पर्याय वाले] की भक्ति करने से ।

6—बहुश्रुत (सूत्र, अर्थ, तदुभय युक्त) मुनिराज की भक्ति करने से।

7—तपस्वी मुनिराज की भक्ति करने से।

8—ज्ञान की निरन्तर आराधना करते रहने से।

9—सम्यक्त्व का निरतिचार पालन करने से।

10—गुणज्ञ रत्नाधिको का तथा ज्ञानादि का विनय करने से।

11—भावपूर्वक उभय-काल षडावश्यक (प्रतिक्रमण) करते रहने से।

12—मूलगुण और उत्तरगुणो का निर्दोष रीति से शुद्धता पूर्वक पालन करने से।

13—सदा सवेग भाव रखने से अर्थात् शुभ ध्यान करते रहने से।

14—तपस्या करते रहने से।

15—भक्तिपूर्वक सुपात्र दान देने से।

16—आचार्यादि दस की वैयावृत्य करने से।

17—सेवा तथा मिष्ट भाषणादि के द्वारा गुर्वादि को प्रसन्न रखने से और स्वय समाधिभाव मे रहने से।

18—नवीन ज्ञान का अभ्यास करते रहने से।

19—श्रुतज्ञान की भक्ति तथा बहुमान करने से।

20—प्रवचन की प्रभावना करने (धर्म का प्रचार करने) से।

उपर्युक्त बीस बोलो की उत्कृष्टतापूर्वक आराधना करने से तीर्थंकर नाम-कर्म का बन्ध होता है। इस बन्ध के उदय वाले महापुरुष, तीर्थंकर बन कर मोक्ष-मार्ग का प्रवर्त्तन करते है और भव्य जीवों का कल्याण करते हैं।

जयंतीबाई के प्रश्न

श्री भगवती सूत्र के 12वें शतक के दूसरे उद्देश में 'जयतीबाई' के प्रश्न और भगवान् के उत्तर का वर्णन इस प्रकार है।

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे कौशाम्बी नाम की नगरी थी। एक समय भगवान् महावीर स्वामी वहा पधारे। यह समाचार सुनकर सभी नागरिक हर्षित हुए। राजा उदायन आदि वन्दनार्थ गये। जयन्ती श्रमणोपासिका, उदायन नरेश की फूफी थी। वह अपनी भावज–राजमाता मृगावती देवी के साथ प्रभु को वन्दना करने के लिए गयी। भगवान् ने धर्मोपदेश दिया। धर्मकथा सुनकर परिषद् लौट गयी। राजा और रानी भी लौट गये। उस समय जयन्ती श्रमणोपासिका ने भगवान् को वन्दना-नमस्कार करके विनयपूर्वक पूछा—

1 प्रश्न—अहो भगवन् ! जीव के भारी होने का क्या कारण है, और किस प्रकार जीव हलका होता है ?

उत्तर—हे जयन्ती ! अठारह प्रकार के पापो के आचरण मे जीव भारी होता है और इन पापो से विरत होने–त्याग करने से जीव हलका होता है।

2 प्रश्न—अहो भगवान् ! किस कारण से जीव ससार वढाता है और किस आचरण से ससार घटाता है ?

उत्तर—हे जयन्ती ! 18 पापो के आचरण से जीव ससार वढ़ाता है और 18 पापो से निवृत्त होकर जीव ससार घटाता है।

3 प्रश्न–अहो भगवन् ! किस कारण से जीव कर्मों की स्थिति बढाता है और किस आचरण से घटाता है ?

उत्तर–हे जयती ! 18 पापों का आचरण कर के जीव कर्म-स्थिति बढाता है और 18 पापों का त्याग कर के जीव कर्म-स्थिति घटाता है ।

4 प्रश्न–अहो भगवन् ! किस कारण से जीव ससार-सागर मे परिभ्रमण करता है और किस विधि से जीव संसार-सागर को तिर कर पार हो जाता है ?

उत्तर–हे जयती ! 18 पापो के सेवन से जीव ससार सागर में रुलता रहता है और 18 पापों का त्याग कर के जीव, ससार से तिर जाता है ।

5 प्रश्न–अहो भगवन् ! जीवो का भवसिद्धिपना स्वभाव से है, या परिणाम से ?

उत्तर–हे जयती ! जीवो का भवसिद्धिपना स्वभाव से है, परिणाम से नही ।

6 प्रश्न-अहो भगवन् ! क्या सभी भवसिद्धिक जीव मोक्ष प्राप्त करेंगे ?

उत्तर–हां जयती ! सभी भवसिद्धिक जीव मोक्ष प्राप्त करेंगे ।

7 प्रश्न–अहो भगवन् ! सभी भवसिद्धिक जीव मोक्ष मे चले जावेगे, तो लोक, भवसिद्धिक जीवो से रहित हो जाएगा ?

उत्तर–हे जयंती ! 'णो इणट्ठे समट्ठे'-यह नही हो सकता, अर्थात् सभी भवसिद्धिक जीव मोक्ष मे जावेंगे तो भी

यह लोक भवसिद्धिक जीवो से रहित नही होगा।

अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

हे जयती ! यथा दृष्टान्त-जैसे आकाश की श्रेणी अनादि अनन्त है। उसमे से एक-एक परमाणु खड जितना प्रदेश, एक-एक समय मे निकाले। इस प्रकार निकालते-निकालते अनन्त अवसर्पिणी उत्सर्पिणी पूरी हो जाय, तो भी यह आकाश श्रेणी खाली नही होती। इसी प्रकार भवसिद्धिक जीव मोक्ष जावेंगे, तो भी यह लोक भवसिद्धिक जीवो से खाली नही होगा।

8 प्रश्न-अहो भगवन् ! जीव सोते हुए अच्छे या जागते हुए अच्छे ?

उत्तर-हे जयती ! कोई जीव सोते हुए अच्छे होते है, और कोई जीव जागते हुए अच्छे होते है।

अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

हे जयती ! जो जीव अधर्मी है, अधर्म का काम करते हैं, अधर्म का उपदेश देते हैं, अधर्म मे आनन्द मानते है, यावत् अधर्म से आजीविका करते है, वे जीव सोते हुए ही अच्छे हैं। सोते रहने पर वे सभी प्राण, भूत, जीव और सत्व को दुःख नही दे पाते, यावत् परितापना नही उपजाते, अपनी तथा दूसरो की आत्मा को धर्म मे नही जोडते। इस कारण अधर्मी जीव, सोते हुए अच्छे हैं। और जो जीव धर्मी हैं, यावत् धर्म से आजीविका करते हैं, वे जागते हुए अच्छे हैं। जागते हुए वे सभी प्राण, भूत, जीव और सत्व को सुखकारी होते है, यावत् अपनी तथा दूसरो की आत्मा को धर्म मे जोडते हैं।

9–10 जिस प्रकार सोते–जागने के प्रश्नोत्तर कहे, उसी प्रकार बलवान् व निर्बल तथा उद्यमी और आलसी के विषय मे भी कहना चाहिए। इसमे विशेषता यह है कि जिसका उद्यम अच्छा होगा; वह आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, तपस्वी यावत् स्व-धर्मी की वैयावच्च मे अपनी आत्मा को जोडेगा।

11 प्रश्न–अहो भगवान् ! श्रोतेन्द्रिय के वश मे हुआ जीव, कैसे कर्म बांधता है ?

उत्तर- हे जयती ! आयुष्य–कर्म को छोडकर बाकी सात कर्मो की प्रकृति यदि ढीली हो तो गाढी–दृढ–करता है। थोडे काल की स्थिति हो, तो बहुत काल की स्थिति करता है। मन्द रस वाली हो, तो तीव्र रस वाली करता है। आयुष्य बांधता है अथवा नही बांधता। असातावेदनीय कर्म बारम्बार बांधता है और चार गति रूप ससार मे परिभ्रमण करता रहता है।

12 से 15 जिस प्रकार श्रोतेद्रिय के विषय मे कहा, उसी प्रकार चक्षुइद्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय के विषय मे भी कहना चाहिये।

जयंतीबाई श्रमणोपासिका अपने प्रश्नो का उत्तर सुनकर बहुत प्रसन्न हुई। उसे पूर्ण सतोष हुआ। वह वेदानन्दा की तरह दीक्षा लेकर और केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गयी।

रूपी–अरूपी

संसार मे रूपी और अरूपी वस्तुए कितने प्रकार की है, इसका वर्णन श्री भगवती सूत्र श 12 उ 5 मे इस प्रकार है।

1 चौफरसी रूपी के 30 भेद–अठारह पाप, आठ कर्म, एक कार्मणशरीर, दो योग [मन वचन] एक सूक्ष्म पुद्गलास्तिकाय स्कध। ये तीस भेद चौफरसी रूपी के हैं। इनमे पाच वर्ण, दो गध, पाच रस, चार स्पर्श–शीत, उष्ण, रुक्ष [लुखा] और स्निग्ध [चोपडिया] पाये जाते है❀।

2 अठफरसी रूपी मे 15 भेद–छ द्रव्य लेश्या, चार शरीर [औदारिक, वैक्रिय, आहारक और तेजस] घनोदधि, घनवाय तनुवाय, काययोग, वादर पुद्गलास्तिकाय का स्कन्ध [इसमे द्वीप, समुद्र, नरक पृथ्वियां, विमान और सिद्धशिलादि सम्मिलित है] ये 15 अठफरसी है। इनमे पाच वर्ण, दो गध, पाच रस और आठ स्पर्श पाये जाते है।

3 अरूपी 61 भेद–18 अठारह पाप की विरति [त्याग], 12 उपयोग, 6 भाव लेश्या, 5 द्रव्य [पुद्गलास्तिकाय को छोडकर], 4 बुद्धि [उत्पातिकी, वैनयिकी, कार्मिकी, पारिणामिकी], 4 भेद मतिज्ञान के [अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा], 3 दृष्टि, 5 शक्ति [उत्थान, कर्म, वल, वीर्य और पुरुषकार पराक्रम], 4 संज्ञा ये 61 वोल अरूपी के है। इनमे वर्ण, गध, रस और स्पर्श नही पाये जाने। इनमे अगुरु–लघु का एक भागा पाया जाता है।

❀ यद्यपि पुद्गलो के दो तीन आदि स्पर्श भी पाये जाते हैं तथापि वे पुद्गल चतुस्पर्शी जाति के माने गये है, इसी प्रकार चार (खुरदरा, भारी, शीत, रुक्ष) पांच आदि स्पर्श वाले पुद्गल अस्टस्पर्शी जाति के माने गये है। इसलिये यहा पुद्गलो के चौस्पर्शी और अष्टस्पर्शी–ये दो भेद ही किये हैं।

आत्मारंभी परारंभी

श्री भगवती सूत्र के पहले शतक के पहले उद्देशे मे आत्मारम्भी परारम्भी का वर्णन इस प्रकार है—

प्रश्न—अहो भगवन् ! क्या जीव आत्मारभी है, * परारम्भी है, तदुभयारम्भी है या अनारम्भी हैं ?

उत्तर—हे गौतम ! जीव के दो भेद हैं-6 ससार-समापन्नक (ससारी) और 2 असंसार-समापन्नक (सिद्ध) सिद्ध भगवान् न तो आत्मारम्भी हैं, न परारम्भी हैं और न तदुभयारम्भी है, वे अनारम्भी हैं। ससारी जीव क दो भेद हैं-सयति और असयति। सयति के दो भेद हैं—प्रमादी और अप्रमादी। अप्रमादी सयति न तो आत्मारम्भी है, न परारम्भी है और न तदुभयारम्भी है, किन्तु अनारम्भी हैं। प्रमादी के दो भेद है-शुभयोगी और अशुभयोगी। शुभयोगी भी न तो आत्मारम्भी है न परारम्भी हे और न तदुभयारम्भी है, किन्तु अनारम्भी है। अशुभयोगी आत्मारम्भी भी है परारम्भो भी है और तदुभयारम्भी भी है किन्तु अनारम्भी नही है। अशुभयोगी के समान असयति और 23 दण्डक है। मनुष्य, समुच्चय जीव के समान है, किन्तु विशेषता यह है कि ससारी और सिद्ध ये दो भेद नही कहना चाहिए। सलेशी (लेश्या सहित) समुच्चय मनुष्य के समान है। कृष्ण, नील और कापोत लेश्या वाले 22 दण्डक आत्मारम्भी है, परारम्भी है और तदुभयारम्भी है, अनारम्भी नही हैं। समुच्चय जीव, तेजोलेशी 18 दण्डक, पद्मलेशी, शुक्ललेशी तीन-तीन दण्डक, मनुष्य के समान है।

इहभविक पारभविक

श्री भगवती सूत्र के पहले शतक के पहले उद्देशे में इहभविक-पारभविक का वर्णन इस प्रकार हैं—

1 प्रश्न–अहो भगवन्! ज्ञान, इहभविक (इस भव मे) है, पारभविक (पर भर मे) है, या तदुभय-भविक (दोनों भवो मे) है ?

उत्तर–हे गौतम! ज्ञान इहभविक भी है, पारभविक भी है और तदुभय-भविक है।

2 प्रश्न–अहो भगवन्! दर्शन, इहभविक भी है, पारभविक है और तदुभय-भविक है ?

उत्तर–हे गौतम! दर्शन इहभविक भी है, पारभाविक भी है और तदुभय-भविक भी है।

3 प्रश्न–अहो भगवन्! चारित्र, इहभविक है, पारभविक है या तदुभय-भविक है ?

उत्तर–हे गौतम! चारित्र, इहभविक है, किन्तु पारभविक नही और तदुभयभविक भी नही है। इसी प्रकार तप और सयम भी इहभविक है, पारभविक और तदुभयभविक नही है।

संसार–संचिट्ठण काल

श्री भगवती सूत्र के पहले शतक के दूसरे उद्देशे में 'संसार-संचिट्ठण काल' का अधिकार इस प्रकार हैं—

चउ संचिट्ठणा होइ, कालो सुण्णासुण्ण मीसो ।
तिरियाणं सुण्णवज्जो, सेसे तिण्णि अप्पाबहूं ॥

1 प्रश्न-अहो भगवन् ! ससार, सचिट्ठण काल❀ [ससार सस्थान काल] कितने प्रकार का है ?

उत्तर-हे गौतम ! चार प्रकार का है-1 नारकी ससार, सचिट्ठण काल, 2 तिर्यंच-ससार-सचिट्ठण काल, 3 मनुष्य-ससार सचिट्ठण काल और 4 देव-ससार-सचिट्ठण काल ।

2 प्रश्न-अहो भगवन् ! नारकी-ससार-सचिट्ठण काल कितने प्रकार का है ?

❀ 'यह जीव अतीत काल मे किस गति मे रहा था' यह बतलाना ससार-सचिट्ठण काल, कहलाता है ।

1 एक नारकी का नेरिया, नारकी से निकलकर दूसरी गति मे उत्पन्न हुआ । वहा से फिर पीछा नारकी मे उत्पन्न हुआ । यह जितने नेरियों को सातो नारकियो मे छोडकर गया था, उनमे से एक भी वहा नही मिले अर्थात् नरकों मे से निकल कर सभी नारक दूसरी गतियो मे चले गये हो, उसे 'शून्यकाल' कहते हैं ।

2 एक नारकी का नेरिया, नरक से निकलकर दूसरी गति मे उत्पन्न हुआ, फिर वहां से वापिस नरक मे उत्पन्न हुआ । वह पहले जितने नेरियो को छोडकर गया था, उतने सभी वहा मिले अर्थात् वहा से एक भी मरा नही हो और एक भी नया आकर उत्पन्न नही हुआ हो, उसे 'अशून्यकाल' कहते हैं ।

3 एक नारकी का नेरिया, नरक से निकलकर दूसरी गति मे उत्पन्न हुआ । वहा से लौटकर फिर नरक मे उत्पन्न हुआ, वह जितने नेरियो को छोडकर गया था, उनमे से कुछ निकलकर दूसरी गति मे चले गये हों, और कुछ नये उत्पन्न हो गये हों, यहा तक कि पहले नेरियो मे से एक भी नेरिया वहा मिले, तो उसे 'मिश्रकाल' कहते है ।

उत्तर-हे गौतम ! तीन प्रकार का है-1 शून्यकाल, 2 अशून्य काल और 3 मिश्रकाल । इसी प्रकार मनुष्य और देव मे भी ससार सचिट्ठणकाल तीन-तीन पाते हैं। तिर्यंच मे ससार सचिट्ठणकाल दो पाते है-1 अशून्यकाल और 2 मिश्र काल ।

3 प्रश्न-अहो भगवन् ! नारकी मे कौन-सा काल थोड़ा है और कौन-सा काल वहुत है ?

उत्तर-हे गौतम ! सबसे थोडा अशून्यकाल, उससे मिश्रकाल अनन्त गुण, उससे शून्यकाल अनन्त गुण । इसी प्रकार मनुष्य और देव की अल्प-वहुत्व कहना चाहिए । तिर्यच मे सबसे थोडा अशून्य काल, उससे मिश्र काल अनन्त गुणा है ।

4 प्रश्न—अहो भगवन् ! चार प्रकार के ससार-सचिट्ठण काल मे कौन-सा थोडा और कौन-सा वहुत है ?

उत्तर-सबसे थोडा मनुष्य ससार-सचिट्ठण काल है, उससे नारकी-ससार-सचिट्ठण काल असंख्यात गुण, उससे देव-ससार सचिट्टण काल असख्यात गुण और उससे तिर्यच-ससार-सचिट्ठण काल अनन्त गुण है ।

असंयतादि भव्य-द्रव्य-देश

श्री भगवती सूत्र के पहले शतक के दूसरे उद्देशे में असंयत भव्य-द्रव्य-देव विषयक वर्णन इस प्रकार है—

1 प्रश्न—अहो भगवन् ! *असयत भव्य-द्रव्य-देव मर कर कहां उत्पन्न होता है ?

उत्तर—हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट ऊपर के (नौवे) ग्रैवेयक मे उत्पन्न होता है ।

2 प्रश्न–अहो भगवन् ! अविराधक साधुजी मरकर कहा उत्पन्न होते है ?

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य पहले देवलोक मे, उत्कृष्ट सर्वार्थसिद्ध मे उत्पन्न होते है।

3 प्रश्न–अहो भगवन् ! विराधक साधुजी मरकर कहा उत्पन्न होते हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट पहले देवलोक मे उत्पन्न होते हैं।

4 प्रश्न–अहो भगवन् ! अविराधक श्रावक मर कर कहा उत्पन्न होते हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य पहले देवलोक मे, उत्कृष्ट बारहवें देवलोक मे उत्पन्न होते है।

5 प्रश्न–अहो भगवन् ! विराधक श्रावक मरकर कहा उत्पन्न होते है ?

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट ज्योतिषी मे उत्पन्न होते हैं।

6 प्रश्न–अहो भगवन् ! असन्नी (विना मन वाले जीव अकाम-निर्जरा करने वाले) मरकर कहा उत्पन्न होते है ?

उत्तर–हे गौतम जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट वाणव्यतर मे उत्पन्न होते हैं।

7 प्रश्न-अहो भगवन् ! कन्द-मूल भक्षण करने वाले तापस मरकर कहां उत्पन्न होते है ?

उत्तर–हे गौतम जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट ज्योतिषी मे उत्पन्न होते हैं।

8 प्रश्न–अहो भगवन् ! कान्दर्पिक (हसी-मजाक करने वाले) साधु मरकर कहा उत्पन्न होते है ?

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट पहले देवलोक मे उत्पन्न होते हैं !

9 प्रश्न–अहो भगवन् ! चरक-परिव्राजक और अम्बडजी के मत के सन्यासी मरकर कहा उत्पन्न होते है ।

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट पाचवे देवलोक मे उत्पन्न होने है ।

10 प्रश्न–किल्विषी भावना वाले तथा आचार्य-उपाध्याय आदि के अवर्णवाद बोलने वाले साधु मरकर कहा उत्पन्न होते है ।

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट छठे देवलोक मे उत्पन्न होते है ।

11 प्रश्न–अहो भगवन् ! सन्नी तिर्यंच मरकर कहा उत्पन्न होते है ।

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट आठवे देवलोक मे उत्पन्न होते है ।

12 प्रश्न–अहो भगवन् ! आजीवक (गोशालक) मत के मानने वाले साधु मरकर कहा उत्पन्न होते है ?

*ऊपर ने साधु की क्रिया करने वाले, किन्तु भाव म सम्यक् चारित्र के परिणामो से रहित मिथ्यादृष्टि जीव, 'असयत भव्य-द्रव्य-देव' कहे गये है, तथा देव का आयुष्य बाधे हुए अविरत मनुष्य और तिर्यंच भी 'असयत भव्य-द्रव्य-देव' कहे गये हैं ।

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट बारहवें देवलोक मे उत्पन्न होते हैं।

13 प्रश्न–अहो भगवन् ! अभियोगिक (मत्र-जत्रादि करने वाले) साधु मरकर कहा उत्पन्न होते हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट बारहवें देवलोक मे उत्पन्न होते हैं।

14 प्रश्न–अहो भगवन् ! सलिगी दर्शन-व्यापन्न (साधु के लिग को धारण करने वाले समकित से भ्रष्ट, निन्हव आदि) मरकर कहां उत्पन्न होते हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट ऊपर के (नौवे) ग्रैवेयक मे, उत्पन्न होते हैं।

सवणे णाणे

श्री भगवती सूत्र के दूसरे शतक के पाचवे उद्देशे में 'सवणे णाणे' के प्रश्नोत्तर इस प्रकार हैं–

सवणे णाणे य विण्णाणे, पच्चखाणे य संजमे।
अणण्हये तवे चेव, वोदाणे अकिरिया सिद्धी ॥

1 प्रश्न–अहो भगवन् ! तथारूप के श्रमण-माहण की पर्युपासना करने वाले पुरुष को उसकी पर्युपासना (सेवा) का क्या फल मिलता है ?

उत्तर–हे गौतम ! 'श्रवण' फल मिलता है अर्थात् सम्यक् शास्त्रों का सुनना मिलता है।

2 प्रश्न-अहो भगवन् ! श्रवण का क्या फल है ?
उत्तर-हे गौतम ! श्रवण का फल ज्ञान (जानपना) है ।

3 प्रश्न-अहो भगवन् ज्ञान का क्या फल है ?
उत्तर-हे गौतम ! ज्ञान का फल विज्ञान' (विवेचनपूर्वक) ज्ञान है ।

4 प्रश्न-अहो भगवन् विज्ञान का क्या फल है ?
उत्तर-हे गौतम विज्ञान का फल पच्चक्खाण' है ।

5 प्रश्न-अहो भगवन् ! पच्चक्खाण का क्या फल है ?
उत्तर हे गौतम ! पच्चक्खाण का फल 'सयम' है ।

6 प्रश्न-अहो भगवन् ! सयम का क्या फल है ?
उत्तर-हे गौतम ! सयम का फल 'अनाश्रव' (आश्रव' रहित होता) है ।

7 प्रश्न-अहो भगवन् ! अनाश्रव का क्या फल है ?
उत्तर-हे गौतम ! अनाश्रय का फल 'तप' है ।

8 प्रश्न-अहो भगवन् ! तप का क्या फल है ?
उत्तर-हे गौतम ! तप का फल 'वोदाण' (कर्मों का नाश) है ।

9 प्रश्न-अहो भगवान् ! वोदाण का क्या फल है ?
उत्तर-हे गौतम ! वोदाण का फल 'अक्रिया' (निष्क्रयता-क्रिया-रहित होना) है ।

10 प्रश्न-अहो भगवान् ! अक्रिया का क्या फल है ?
उत्तर-हे गौतम ! अक्रिया का फल 'सिद्धी' है ।

पचास बोलों की बन्धी

श्री भगवती सूत्र के छठे शतक के तीसरे उद्देशे मे 50 बोलो का बन्धी का वर्णन इस प्रकार हैं—

वेय–संजय–दिट्ठी, सण्णी भवि दंसण-पज्जत्ते ।
भासग-परित्त-णाण, जोगु-वश्रोग श्राहार सुहुम चरमेसु ।।

इसके पन्द्रह द्वार इस प्रकार है ।

1 वेद द्वार, 2 सयत, 3 दृष्टि, 4 सज्ञी, 5 भव्य, 6 दर्शन 7 पर्याप्त, 8 भाषक, 9 परित्त, 10 ज्ञान, 11 योग, 12 उपयोग, 13 आहारक, 14 सूक्ष्म और 15 चरम द्वार ।

1 वेद द्वार के 4 भेद-स्त्रीदेवी, पुरुषवेदी, नपु सकवेदी और अवेदी ।

2 सयत द्वार के 4 भेद-सयत, असयत, सयतासयत और नो-सयत नो-असयत नो-सयतासयत (सिद्ध)

3 दृष्टि द्वार के 3 भेद-सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि (मिश्रदृष्टि) ।

4 सज्ञी (सन्नी) द्वार के तीन भेद-सज्ञी, असज्ञी और नो-सज्ञी नो-असज्ञी ।

6 दर्शन द्वार के 4 भेद-चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधि-दर्शन और केवलदर्शन ।

7 पर्याप्त द्वार के 3 भेद-पर्याप्त, अपर्याप्त और नो-पर्याप्त नो-अपर्याप्त (सिद्ध) ।

8 भापक द्वार 2 भेद-भाषक और अभापक ।

9 परित्त द्वार के 3 भेद-परित्त, अपरित्त और नो-परित्त नो-अपरित्त (सिद्ध) ।

10 ज्ञान द्वार के 8 भेद-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और विभंग-ज्ञान ।

16 योग द्वार के 4 भेद-मन योगी, वचन योगी, काय योगी और अयोगी ।

12 उपयोग द्वार के 2 भेद-साकारोपयोग-ज्ञान और अनाकारोपयोग–दर्शन ।

13 आहारक द्वार के दो भेद-आहारक और अनाहारक ।

14 सूक्ष्म द्वार के 3 भेद-सूक्ष्म, वादर और नो-सूक्ष्म नो-वादर (सिद्ध) ।

15 चरम द्वार के 2 भेद-चरम और अचरम ।

ये कुल 50 वोल हुए ।

इनमे से जिन–जिन जीवों मे जितने वोल पाये जाते हैं, वे समुच्चय (घड़ा) रूप से कहे जाते हैं ।

पहली नारकी मे वोल पावे 34 । शेप 6 नारकी मे वोल पावे 33-33 ।

भवनपति और वाणव्यन्तर देवो के वोल पावे 35 ।

ज्योतिपी देवों मे तथा पहले-दूसरे देवलोक मे वोल पावे 34 ।

तीसरे देवलोक से नव ग्रैवेक तक वोल पावे 33 ।

पाच अनुत्तर विमानो मे वोल पावे 25 ।

पाच स्थावर मे वोल पावे 23 ।

वेइद्रिय, तेइद्रिय मे वोल पावे 27 ।

चौइद्रिय, मे और असन्नी तिर्यंच पंचेद्रिय मे वोल पावे 28 ।

सन्नी तिर्यंच पचेद्रिय मे वोल पावे 36 ।

असन्नी मनुष्य मे वोल पावे 22 ।

सन्नी मनुष्य मे वोल पावे 43 ।

सिद्ध भगवान मे वोल पावे 16 ।

समुच्चय जीव मे वोल पावे 50 ।

50 बोलो मे से किस बोल मे, कितने कर्मों का बन्ध होता है, वह इस प्रकार है—

1 वेद द्वार-तीन वेदो मे 7 कर्मों की नियमा और आयुकर्म की भजना। अवेदी में 7 कर्मों की भजना और आयुकर्म का अबध।

2 सयत द्वार—सयत मे 8 कर्मों की भजना। असयत और सयता सयत मे 7 कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नोसयत नो-असयत नो-सयतासयत मे 8 कर्मों का अवन्ध।

3 दृष्टि द्वार—सम्यगदृष्टि मे 8 कर्मों की भजना। मिथ्यादृष्टि मे 7 कर्मों की नियमा और आयुकर्म की भजना। मिश्रदृष्टि मे 7 कर्मो की नियमा और आयुकर्म का अबध।

4 सज्ञी (सन्नी) द्वार—सज्ञी मे 7 कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। असज्ञी मे 7 कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नो-सज्ञी नो-असंज्ञी मे वेदनीय की भजना, 7 कर्मों का अवध।

5 भव्य द्वार—भव्य मे 8 कर्मो की भजना। अभव्य मे 7 कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नोभव्य नोअभव्य मे 8 कर्मों का अवध।

6 दर्शन द्वार—तीन दर्शन (चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन) मे 7 कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। केवल दर्शन मे वेदनीय की भजना, 7 कर्मो का अवन्ध।

7 पर्याप्त द्वार—पर्याप्त मे 8 कर्मो की भजना। अपर्याप्त मे 7 कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना, नो-पर्याप्त नो-अपर्याप्त मे आठ 8 कर्मों का अवध।

8 भाषक द्वार—भाषक मे 7 कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। अभाषक मे 8 कर्मो की भजना।

9 परित्त द्वार-परित्त मे 8 कर्मों की भजना । अपरित्त मे 7 कर्मों की नियमा, आयुकर्मो की भजना । नो परित्त नो अपरित्त मे 8 कर्मो का अवध ।

10 ज्ञान द्वार-चार ज्ञान मे 7 कर्मो की भजना, वेदनीथ की नियमा । केवलज्ञान मे वेदनीय की भजना, 7 कर्मो का अवधं । तीन अज्ञान मे कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना ।

11 योग द्वार-तीन योग मे 7 कर्मों की भजना, वेदनीय को नियमा । अयोगो मे 8 कर्मो का अवध ।

12 उपयोग द्वार-साकारोपयोग और अनाकारोपयोग मे 8 कर्मो की भजना ।

13 अहारक द्वार-आहरक मे 7 कर्मों की भजना । वेदनीय की नियमा । अनाहारक मे 7 कर्मो की भजना, आयुकर्म का अवध ।

14 सूक्ष्म द्वार-मूक्ष्म मे 7 कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना । वादर मे 8 कर्मो की भजना । नोसूक्ष्म नोवादर (सिद्ध) मे 8 कर्मो का अवध ।

15 चरम द्वार-चरम और अचरम मे 8 कर्मो की भजना ।

काम-भोगादि

श्री भगवती सूत्र के सातवे शतक के सातवे उद्देशे मे काम-भोगादि का थोकडा इस प्रकार है-

1 अहो भगवन् ! उपयोग-सहित गमनागमनादि क्रिया करते हुए सवर युक्त अनगार, को इरियावहो (ऐर्यापथिकी) क्रिया लगती है या सापरायिकी क्रिया लगती है ?

हे गौतम ! अकषायी सवृत्त अनगार, सूत्र विधि से चलता है। इसलिए उसे इरियावही क्रिया लगती है, सापरायिकी क्रिया नही लगती। कपाय-सहित, सूत्र–विरुद्ध चलने वाले अनगार की सापरायिकी क्रिया लगती है?

2 अहो भगवन् ! काम कितने प्रकार के है?

हे गौतम ! काम दो प्रकार के है-शब्द और रूप।

3 अहो भगवन् ! काम रूपी है या अरूपी ? सचित्त है या अचित्त ? जीव है या अजीव ?

हे गौतम ! काम रूपी है, अरूपी नही। काम सचित्त भी है और अचित्त भी है, तथा जीव भी है और अजीव भी है।

4 अहो भगवन् ! काम जीवो के होता या अजीवो के ?

हे गौतम ! काम जीवो के होता है अजीवो के नही।

5 अहो भगवन् ! भोग कितने प्रकार के हैं ?

हे गौतम ! भोग तीन प्रकार के हैं-गध, रस और स्पर्श।

6 अहो भगवन् ! भोग रूपी है या अरूपी ? सचित्त है या अचित्त ? जीव है या अजीव ?

हे गौतम ! भोग रूपी है, अरूपी नही। भोग सचित्त भी है और अचित्त भी तथा भोग जीव भी है और अजीव भी है।

7 अहो भगवन् ! भोग जीवो के होता है या अजीवो के ?

हे गौतम ! भोग जीवो के होता है, अजीवो के नही।

8 अहो भगवन् ! नारकी के नेरिये कामी है या भोगी।

हे गौतम ! नेरिये कामी भी है और भोगी भी है।

9 अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

हे गौतम ! श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय की अपेक्षा कामी है और घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय तथा स्पर्शनेन्द्रिय की अपेक्षा भोगी है। इसी प्रकार भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक, तिर्यच पचेन्द्रिय और मनुष्य–ये 15 दण्डक कहना चाहिए। चौइन्द्रिय जीव, चक्षुइन्द्रिय की अपेक्षा कामी है और घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय की अपेक्षा भोगी है। तेइन्द्रिय, वेइन्द्रिय और एकेन्द्रिय (पाच स्थावर) से सभी कामी नही, भोगी है।

अल्प-वहुत्व—सवसे थोडे कामी-भोगी, उनसे नो कामी-नो भोगी (सिद्ध) अनन्त गुण और उनसे भोगी अनन्त गुण।

प्रत्यनीक

श्री भगवती सूत्र के आठवे शतक के आठवे उद्देशे मे 'प्रत्यनीक' का अधिकारी इस प्रकार है—

प्रत्यनीक का अर्थ है—द्वेषी, विरोधी, निन्दक वैरी।

1 अहो भगवान् ! गुरु के कितने प्रत्यनीक है ?

हे गौतम ! गुरु के तीन प्रत्यनीक है—1 आचार्य का प्रत्यनीक, 2 उपाध्याय का प्रत्यनीक और 3 स्थविर का प्रत्यनीक।

2 अहो भगवान् ! गति सम्वन्धी कितने प्रत्यनीक है ?

हे गौतम ! गति सम्वन्धी तीन प्रत्यनीक है, 1 इहलोक प्रत्यनीक–इन्द्रियादि के प्रतिकूल अज्ञान कष्ट सहने वाला,

2 परलोक–प्रत्यनीक–इन्द्रियो के विषय–भोगो मे तल्लीन रहने वाला, 3 उभयलोक प्रत्यनीक–चोरी आदि द्वारा इन्द्रियो के विषय भोगो मे तल्लीन रहकर दोनो लोक विगाडने वाला ।

3 अहो भगवन् ! समूह–प्रत्यनीक कितने हैं ?

हे गौतम ! समूह–प्रत्यनीक तीन हैं–1 कुल (एक गुरु के शिष्य) का प्रत्यनीक, 2 गण (बहुत गुरुओ के शिष्य) का प्रत्यनीक, 3 सघ [साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका] का प्रत्यनीक ।

4 अहो भगवन् ! अनुकम्पा–प्रत्यनीक कितने है ?

हे गौतम ! अनुकम्पा सम्बन्धी तीन प्रत्यनीक हैं–1 तपस्वी का प्रत्यनीक, 2 ग्लान [रोगी साधु] का प्रत्यनीक और 3 शैक्ष [नवदीक्षित साधु] का प्रत्यनीक ।

5 अहो भगवन् ! श्रुत–प्रत्यनीक कितने हैं–हे गौतम ! 1 सूत्र का प्रत्यनीक, 2 अर्थ का प्रत्यनीक और 3 तदुभय [सूत्र अर्थ दोनो] का प्रत्यनीक ।

6 अहो भगवन् ! भाव–प्रत्यनीक कितने है ?

हे गौतम ! भाव–प्रत्यनीक तीन हैं–1 ज्ञान–प्रत्यनीक, 2 दर्शन–प्रत्यनीक और 3 चारित्र–प्रत्यनीक ।

व्यवहार

श्री भगवती सूत्र के आठवें शतक के आठवें उद्देशे में' व्यवहार' का अधिकार इस प्रकार हैं—

1 अहो भगवन् ! व्यवहार कितने प्रकार के है ?

हे गौतम ! *व्यवहार पाच प्रकार के हैं—1 आगम

*मोक्षाभिलाषी जीवो की प्रवृत्ति और निवृत्ति को तथा प्रवृत्ति निवृत्ति के ज्ञान को व्यवहार कहते हैं।

1 आगम-व्यवहार-केवलज्ञान, मन पर्ययज्ञान, अवधिज्ञान, चौदह पूर्व और दस पूर्व का ज्ञान—'आगम' कहलाता है। आगम ज्ञान से चलाई हुई प्रवृत्ति-निवृत्ति को 'आगम व्यवहार' कहते हैं।

2 श्रुत-व्यवहार (सूत्र व्यवहार)-आचारकल्प आदि श्रुतज्ञान कहलाता है। श्रुतज्ञान मे चलाई हुई प्रवृत्ति-निवृत्ति को 'श्रुत-व्यवहार' कहते हैं।

3 आज्ञा-व्यवहार-अतिचारो की आलोचना करने के लिये, किसी गीतार्थ साधु ने अपने अगीतार्थ शिष्य के साथ, दूसरे देश मे रहे हुए गीतार्थ साधु के पास, गूढ अर्थ वाले पद भेजें। उन गूढ अर्थ वाले पदो को समझ कर उस गीतार्थ साधु ने वापिस गूढ अर्थ वाले पदो मे अतिचारो की शुद्धि के लिए प्रायश्चित भेजा। इसे 'आज्ञा-व्यवहार' कहते हैं।

4 धारणा-व्यवहार द्रव्य-क्षेत्र, काल और भाव का विचार करके गीतार्थ साधु ने जिस अपराध मे जो प्रायश्चित्त दिया हो, उसकी धारणा से वैसे ही अपराध मे उसी प्रकार का प्रायश्चित देना 'धारणा-व्यवहार' कहलाता है। अथवा कोई साधु सभी छेद सूत्र नही सीख सकता हो, उसे गुरु महाराज, जो प्रायश्चित पद सिखावें, उनको धारण करना 'धारणा-व्यवहार' कहलाता है।

5 जीत व्यवहार-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा शारीरिक बल, धैर्य आदि की हानि का विचार करके जो प्रायश्चित दिया जाता है, वह 'जीत व्यवहार' कहलाता है अथवा गीतार्थ साधु मिल कर जो शास्त्रो से अविरोधी एव पूर्व पुरुषो द्वारा आचरित मर्यादा बाधते हैं, वह 'जीत-व्यवहार' कहलाता है।

कर्म और परीषह

श्री भगवती सूत्र के आठवे शतक के आठवे उद्देशे मे 'कर्म और परीषह' का अधिकार इस प्रकार हैं—

1 अहो भगवान् ! कर्म प्रकृतियें कितनी है ?

हे गौतम ! कर्म प्रकृतिया आठ हैं–1 ज्ञानावरणीय, 2 दर्शनावरणीय, 3 वेदनीय, 4 मोहनीय, 5 आयु, 6 नाम, 7 गो: और 8 अन्तराय।

2 अहो भगवन् परीषह कितने हैं ?

हे गौतम ! परीषह 22 है–❀1 क्षुधा परीषह, 2 पिपास परीषह, 3 शीत परीषह, 4 उष्ण परीषह, 5 दशमशक परीषह 6 अचेल परीषह, 7 अरति परीषह, 8 स्त्री परीषह, 9 चर्या परीषह, 10 निषद्या परीषह, 11 शय्या परीषह, 12 आक्रोश परीषह 13 वध परीषह, 14 याचना परीषह, 15 अलाभ परीषह, 1(रोग परीषह, 17 तृणस्पर्श परीषह, 18 जल्ल परीषह, 19 सत्का पुरस्कार परीषह, 20 प्रज्ञा परीषह, 21 अज्ञान परीषह औ दर्शन परीषह।

2 अहो भगवन् ! कितने कर्मों के उदय से परीषह आते हैं !

हे गौतम ! ज्ञानावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, और अन्तराय इन चार कर्मों के उदय से परीषह आते हैं।

ज्ञानावरणीय के उदय से प्रज्ञा परीषह और अज्ञान परीषह आते हैं।

वेदनीय के उदय से 11 परीषह होते हैं–क्षुधा परीषह, पिपासा परीषह, शीत परीषह, उष्ण परीषह, दशमशक परीषह,

चर्या परीषह शय्या परीषह, वध परीषह, रोग परीषह, तृण-स्पर्श परीषह और जल्ल परीषह।

मोहनीय कर्म के उदय से 8 परीषह होते हैं। दर्शन-मोहनीय के उदय से एक दर्शन परीषह, और चारित्त-मोहनीय के उदय से सात परीषह होते है। यथा-अचेल परीषह, अरति परीषह स्त्री परीषह, निषद्या परीषह, आक्रोश परीषह, याचना परीषह और सत्कार-पुरस्कार परीषह।

अन्तराय कर्म के उदय से अलाभ परीषह होता है।

3 अहो भगवन् एक जीव के एक साथ कितने परीषह होते है ?

हे गौतम ! सात कर्म बन्धक (तीसरे आठवें और नौवें गुण-स्थानवर्ती) और आठ कर्म (तीसरे, को छोड कर सात गुणस्थान तक) बाधने वाले जीव के 22 परीषह होते हैं परन्तु वह एक समय मे 20 परीषह तक वेदता है। शीत, उष्ण-इन दोनो परी-षहो मे से एक वेदता है, और चर्या, निसीहिया-इन दोनो मे से एक वेदता है।

छह कर्मो के (आयुष्य और मोह वर्ज कर) बधक सारगी छद्मस्थ दसवे गुणस्थान मे तथा एक वेदनीय कर्म के बधक वीत-रागी छद्मस्थ को (ग्यारहवे-बारहवे गुणस्थान मे) 14 परीषह [22 मे से मोहनीय कर्म के 8 परीषहो को छोडकर] होते हैं, किंतु एक साथ 12 परीषह वेदते है [शीत, उष्ण मे से एक और चर्या शय्या मे से एक वेदते हैं।]

तेरहवे गुणस्थान मे एक कर्म के बन्धक को और चौदहवें गुणस्थान मे अबन्धक को वेदनीय के 11 परीषह होते है।

इनमे से एक साथ 9 वेदते है [शीत और उष्ण मे से एक तथा चर्या और शय्या मे से एक]।

आराधना

श्री भगवती सूत्र के आठवे शतक के दशवे उद्देशे मे 'आराधना' का विधान इस प्रकार हैं—

1 अहो भगवन् ! आराधना कितने प्रकार की है ?

हे गौतम आराधना तीन प्रकार की है। यथा–1 ज्ञान आराधना ❀ 2 दर्शन आराधना और 3 चारित्र आराधना।

ज्ञान आराधना के तीन भेद–1 उत्कृष्ट ज्ञान आराधना, 2 मध्यम ज्ञान आराधना और 3 जघन्य ज्ञान आराधना। इसी प्रकार दर्शन आराधना और चारित्र आराधना के भी उत्कृष्ट मध्यम और जघन्य, ये तीन-तीन भेद है।

ज्ञान, दर्शन और चारित्र की उत्कृष्ट रुचि को ज्ञानादि की उत्कृष्ट आराधना कहते है। मध्यम और जघन्य रुचि को मध्यम और जघन्य आराधना समझनी चाहिए।

उत्कृष्ट ज्ञान आराधना मे दर्शन आराधना दो प्रकार की होती है—उत्कृष्ट दर्शन आराधना और मध्यम दर्शन आराधना।

उत्कृष्ट दर्शन आराधना मे ज्ञान आराधना तीनो पाई जाती है।

उत्कृष्ट ज्ञान आराधना मे चारित्र आराधना दो पावे-उत्कृष्ट और मध्यम।

उत्कृष्ट चारित्र आराधना मे ज्ञान आराधना तीन पावे।

उत्कृष्ट दर्शन आराधना मे चारित्र आराधना तीन पावे।

उत्कृष्ट चारित्र आराधना मे उत्कृष्ट दर्शन आराधना की नियमा है।

उत्कृष्ट ज्ञान आराधना, उत्कृष्ट दर्शन आराधना और उत्कृष्ट चारित्र आरावना वाला जीव, जघन्य उसी भव मे और उत्कृष्ट दो भव मे मोक्ष जाता है।

मध्यम ज्ञान आराधना, मध्यम दर्शन आरावना और मध्यम चारित्र आराधना वाला जीव जघन्य दो भव मे और उत्कृष्ट तीन भव मे मोक्ष जाता है।

जघन्य ज्ञान आराधना, जघन्य दर्शन आराधना, जघन्य चारित्र आराधना वाला जीव, जघन्य जीव भव और उत्कृष्ट 7-8 भव मे मोक्ष जाता है।

भव-भ्रमण

श्री भगवती सूत्र के 12वे शतक के 7वे उद्देशे मे भव-भ्रमण का वर्णन इस प्रकार हैं—

1 अहो भगवन् ! यह लोक कितना बडा हे ?

हे गौतम ! यह लोक असख्यात कोडा-कोडी योजन का लम्बा-चोडा विस्तार वाला है।

2 अहो भगवन् ! इतने वड़े लोक मे क्या कोई एक भी ऐसा आकाश-प्रदेश है, जहा इस जीव ने जन्म-मरण नही किया हो ?

हे गौतम ! 'नो इणट्ठे, समट्ठे'-ऐसा एक भी आकाश-प्रदेश खाली नही रहा है, जहा इस जीव ने जन्म-मरण नही

किये हो। यथा-बकरियो के बाड़े का दृष्टात। नरक आदि सभी स्थानो मे, सभी जीव त्रस-स्थावरपने अनंत वार उत्पन्न हुए है, परन्तु तीसरे देवलोक से बारहवे देवलोक तक तथा नव ग्रैवेयको मे देवीपने उत्पन्न नही हुए और पाच अनुत्तर विमानो मे देवपने और देवीपने उत्पन्न नही हुए।

3 अहो भगवन् ! यह जीव, सभी जीवो के मातापने, पितापने, भाई, बहन, पुत्र, पुत्री और पुत्रवधूपने उत्पन्न हुआ है।

हां गौतम ! अनेक वार अथवा अनंत वार उत्पन्न हुआ है। इसी प्रकार सभी जीव भी इस जीव के माता-पिता आदि परिवारपने उत्पन्न हुए हैं।

4 अहो भगवन् ! यह जीव, सभी जीवो के शत्रुपने, वैरीपने, घातक, वधक, प्रत्यनीक और मित्रपने उत्पन्न हुआ है ?

हां गौतम ! अनेक वार अथवा अनंत वार उत्पन्न हुआ है इसी प्रकार सभी जीव भी इस जीव के शत्रुपने आदि उत्पन्न हुए हैं। इसी प्रकार यह जीव सभी जीवो का राजा, युवराज यावत् सार्थवाह, दास, चाकर, शिष्य और शत्रुपने, अनेक वार अथवा अनंत वार उत्पन्न हुआ है और सभी जीव भी इसी प्रकार इस जीव के राजापने यावत् शत्रुपने अनेक वार अथवा अनंत वार उत्पन्न हुए है। क्योकि लोक शाश्वत है, अनादि है, जीव नित्य है, अपने कर्मानुसार जन्म-मरण करता है। इससे जीव संसार मे परिभ्रमण करता है।

उपभोग

श्री भगवती सूत्र के 13वे शतक के पहले-दूसरे उद्देशे मे उपयोग का विधान इस प्रकार है—

उपयोग 12 है—मतिज्ञानोपयोग, 2 श्रुतज्ञानोपयोग, 3 अवधिज्ञानोपयोग, 4 मन पर्ययज्ञानोपयोग, 5 केवलज्ञानोपयोग, 6 मतिअज्ञानोपयोग, 7 श्रुतअज्ञानोपयोग, 8 विभगज्ञानोपयोग, 9 चक्षुदर्शनोपयोग, 10 अचक्षुदर्शनोपयोग, 11 अवधिदर्शनोपयोग, 12 केवलदर्शनोपयोग ।

1 पहली, दूसरी और तीसरी नारकी मे जीव 8 उपयोग लेकर जाते हैं-3 ज्ञान, 3 अज्ञान, 2 दर्शन, (अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन)=8। 7 उपयोग लेकर निकलते है,—3ज्ञान, 2अज्ञान 2 दर्शन (अचक्षु और अवधिदर्शन)=7।=87 ।

2 चौथी, पाचवी और छठी नारकी मे 8 उपयोग लेकर जाते है पूर्ववत् और 5 उपयोग लेकर निकलते हैं—2 ज्ञान, 2 अज्ञान, 1 दर्शन अचक्षुदर्शन=5।=85 ।

3 सातवी नारकी मे 5 उपयोग लेकर जाते है—3 अज्ञान, 2 दर्शन (अचक्ष और अवधिदर्शन)=5। 3 उपयोग लेकर निकलते है (2 अज्ञान, 1 अचक्षुदर्शन=3)।=53 ।

4 भवनपति, वाणव्यन्तर और ज्योतिषी मे 8 उपयोग लेकर जाते हैं, पहली नारकीवत् और 5 उपयोग लेकर निकलते हैं (चौथी नारकीवत्]=85 ।

5 पहले देवलोक से नवग्रैवेयक तक मे 8 उपयोग लेकर जाते है, पहली नारकीवत् और 7 उपयोग लेकर निकलते है (पहली नारकीवत्)=87 ।

6 पाच अनुत्तर विमान मे 5 उपयोग लेकर जाते हैं—3 ज्ञान 2 दर्शन (अचक्षु और अवधिदर्शन)=5। और 5 ही उपयोग लेकर निकलते है ।=55

7 पाच स्थावर मे 3 उपयोग लेकर जाते हैं—2 अज्ञान, 1 अचक्षुदर्शन । और ये 3 ही उपयोग लेकर निकलते है ।=33

8 तीन विकलेन्द्रिय मे 5 उपयोग लेकर जाते हैं—2 ज्ञान, 2 अज्ञान, 1 अचक्षुदर्शन=5 और 3 उपयोग लेकर निकलते हैं—2 अज्ञान, 1 अचक्षुदर्शन ।=53

9 तिर्यच पचेन्द्रिय मे 5 उपयोग लेकर जाते है—2 ज्ञान 2 अज्ञान, 1 अचक्षुदर्शन । और 8 उपयोग लेकर निकलते है। पहली नारकी मे उत्पत्तिवत् ।=58

10 मनुष्य मे 7 उपयोग लेकर जाते हैं (3 ज्ञान, 2 अज्ञान, 2 दर्शन-अचक्षु, अवधिदर्शन=7) और 8 उपयोग लेकर निकलते हैं पहली नारकी मे उत्पत्तिवत् ।=78

समकित के 67 बोल

पहले बोले श्रद्धान 4, दूसरे बोल लिग 3, तीसरे बोले विनय के 10 प्रकार, चौथे बोले शुद्धि 3, पाचवे बोले लक्षण 5, छठे बोले दूषण 5, सातवें बोले भूषण 5, आठवे बोले प्रभावना 8, नौवें बोले आगार 6, दसवें बोले यतना 6, ग्यारहवे बोले भावना 6, बारहवें बोले स्थान 6 । ये सभी मिलाकर 67 बोल हुए । अब इनकी व्याख्या दी जाती है—

पहला बोल-चार श्रद्धान-

1 परमार्थ का परिचय करे, अर्थात नव तत्व का ज्ञान प्राप्त करे।

2 परमार्थ के जानने वालो की सेवा करे।

3 जिसने सम्यक्त्व वमन कर दिया (छोड दिया) हो, उसकी सगति नही करे।

4 कुतीर्थियो की सगति से दूर रहे।

दूसरा बोल-तीन लिंग—

1 जैसे तरुण पुरुप राग-रग मे अनुराग रखता है, उसी प्रकार वीतराग की वाणी मे अनुरक्त रहे।

2 जैसे तीन दिन का भूखा मनुष्य, मिष्ठान का भोजन रुचि सहित करता है, उसी प्रकार वीतराग की वाणी आदर सहित सुने।

3 जैसे अनपढ को पढने की चाह रहती है और पढने का सुयोग मिलते ही हर्षित होता है, उसी प्रकार वीतराग की वाणी सुनकर हर्षित होवे।

तीसरा बोल-विनय के 10 प्रकार—

1 अरिहंत भगवान् की विनय-भक्ति करे।

2 सिद्ध भगवान् की विनय-भक्ति करे।

3 आचार्य महाराज की विनय-भक्ति करे।

4 उपाध्यायजी महाराज की विनय-भक्ति करे।

5 स्थविर महाराज की विनय-भक्ति करे।

6 कुल (साधु–समुदाय) की विनय–भक्ति करे।
7 गण (गच्छ) की विनय-भक्ति करे।
8 चतुर्विध सघ (साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका) की विनय–भक्ति करे।
9 साधर्मी की विनय–भक्ति करे।
10 क्रियावान् की विनय–भक्ति करे।

चौथा बोल-तीन शुद्धि–

1 मन–शुद्धि–मन से श्री वीतराग देव का ध्यान करे परन्तु किसी अन्य देव को मन मे नही लावे।
2 वचन शुद्धि–वचनो से श्री वीतराग देव का गुणगान करे, किन्तु किसी अन्य देव की प्रशसा नही करे।
3 काय–शुद्धि–काया से श्री वीतराग देव को वन्दन नमस्कार करे, परन्तु किसी अन्य देव को नही करे।

पांचवां बोल-पांच लक्षण–

1 शम (प्रशम)–अनन्तानुबन्धी, क्रोध, मान, माया और लोभ का उदय न होना।
सम–शत्रु–मित्र पर समभाव रखना।
2 सवेग–वैराग्य भाव–मोक्ष की अभिलाषा होना।
3 निर्वेद-आरम्भ–परिग्रह से निवृत्त होना, ससार से उदासीन होना।
4 अनुकम्पा–दूसरे जीव को दु:खी देख कर दया आना।
5 आस्था–जिन–वचन पर दृढ विश्वास रखना।

छठा बोल-सम्यक्त्व के पांच दूषण-

1 शका–जिन भगवान् के वचनो मे सदेह रखना दोष है।
2 काक्षा–अन्यमतियो का आडम्बर देख कर उनकी चाहना करना दोप है।
3 वितिगिच्छा–करणी के फल मे सदेह रखना दोष है।
4 पर पाखण्डी प्रशसा–अन्य मत वालो की प्रशसा करना।
5 पर पाखण्डी सस्तव–अन्य तीर्थियो के साथ आवागमन रखना और उनकी सगति करना दोप है।

सातवां बोल-सम्यक्त्व के पांच भूषण

1 जिन–शासन मे निपुण होवे।
2 जिन–शासन की प्रभावना करे और उसके गुणो को दीपावे–प्रकट करे।
3 जिन–शासन को मानने वाले साधु, साध्वी श्रावक और श्राविका रूप धर्म-तीर्थ की सेवा–भक्ति करे।
4 अन्य जीवो को धर्म मे स्थिर करे और जिन–मार्ग मे चतुर हो।
5 जिन–प्रवचन एव गुणवानो का आदर-सत्कार एवं महिमा करे।

आठवां बोल–आठ प्रभावना

1 जिस काल मे जितने सूत्र उपलब्ध हो, उतने पढे और अन्य जीवो को प्रतिबोध देकर उनकी उन्नति करे।
2 धर्म–कथा सुनाने मे चतुर हो।

3 प्रत्यक्ष, हेतु–दृष्टांतपूर्वक अन्यमतियो से वाद करके धर्म को दीपावे-प्रभावना करे।

4 निमित्तज्ञान से भूत, भविष्य और वर्तमान काल जाने।

5 कठिन तपस्या करके धर्म की उन्नति करे।

6 अनेक विद्याओ का जानकार होवे।

7 प्रसिद्ध व्रत (ब्रह्मचर्य आदि चार खन्ध) लेवे।

8 शास्त्र के अनुसार कविता रच कर धर्म की उन्नति करे

नौवां बोल छः आगार—

1 राजा के दवाव से अन्यतीर्थी को वन्दना करनी पड़े, तो सम्यक्त्व मे दोष लगता है, परन्तु भग नही होता।

2 कुटुम्ब, जाति, पच आदि के दवाव से अन्य तीर्थी को वन्दनादि करनी पड़े, तो सम्यक्त्व मे दोप लगता है, भग नही होता।

3 वलवान् के डर से अन्यतीर्थो को वन्दनादि करनी पडे तो सम्यक्त्व मे दोप लगता है, भग नही होता।

4 देव के डर से अन्यतीर्थी को वदनादि करनी पड़े, तो दोप लगता है, लेकिन सम्यक्त्व का भग नही होता।

5 माता, पिता, गुरु आदि के आग्रह से अन्यतीर्थी को वदनादि करनी पड़े, तो सम्यक्त्व मे दोप लगता है, परन्तु भग नही होता।

6 दुर्भिक्ष–काल मे आजीविका होना कठिन हो जाय, और न चाहते हुए भी अन्यतीर्थी को वदनादि करनी पडे, तो सम्यक्त्व मे दोप लगता है, भग नहीं होता।

दसवां बोल-छः यतना—

1 ग्रालाप-मिथ्यात्वी से विना कारण नही वोले ग्रौर सम्यग्-दृष्टि से विना वोलाये भी ज्ञान-चर्चा करे ।

2 सलाप-मिथ्यात्वी से विशेप भापण नही करे ग्रौर सम्यग्-दृष्टि से वार-वार ग्रवश्य ज्ञान-चर्चा करे ।

3 दान-मिथ्यात्वी को गुरु-वुद्धि से दान नही देवे, ग्रनुकम्पा दान देने की तीर्थंकर भगवान् की मनाई नही है ।

4 मान-मिथ्यात्वी का ग्रधिक ग्रादर सम्मान नही करे ग्रौर सम्यक्त्वी का वहुत ग्रादर-सम्मान करे ।

5 वदना-मिथ्यात्वी को वदना नही करे ।

6 गुणग्राम-मिथ्यात्वी की प्रशंसा नही करे ग्रौर सम्यक्त्वी के गुणो की प्रशसा करे ।

ग्यारहवां बोल-छः भावना—

1 जीव है ग्रौर जीव का लक्षण चेतना है ।

2 जीव द्रव्य नित्य-शाश्वत है ।

3 जीव कर्मो का कर्त्ता है ।

4 जीव ग्राठ कर्मो का भोक्ता है ।

5 भव्य जीव कर्मो को क्षय कर मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं ।

6 सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यग्चरित्र ग्रौर सम्यग्तप ये मोक्ष के उपाय हैं ।

बारहवां बोल–छः स्थान—

1 धर्म रूपी वृक्ष की सम्यक्त्व रूपी जड़ है।
2 धर्मरूपी नगर की सम्यक्त्व रूपी फाटक है।
3 धर्मरूपी महल की सम्यक्त्व रूपी नीव है।।
4 धर्मरूपी आभूषणो की सम्यक्त्व रूपी पेटी है।
5 धर्मरूपी वस्तुओ की सम्यक्त्व रूपी दुकान है।
6 धर्मरूपी भोजन का सम्यक्त्व रूपी थाल है।

पच्चीस क्रिया

क्रिया से कर्मों का बन्ध होता है। कर्म-बन्ध के कारण क्रियाए पच्चीस प्रकार की है। इनका वर्णन स्था नाग सूत्र स्था. 1 उ. 1 तथा स्था. 5 उ. 2 मे इस प्रकार हैं।

1 **कायिकी क्रिया**—शरीर आदि योगो के व्यापार से होने वाली हलन–चलनादि क्रिया।

इसके दो भेद है—1 अनुपरत कायिकी-विरति के अभाव मे असयमी जीव के शरीरादि से होने वाली क्रिया। दुष्प्रयुक्त कायिकी अयतना से शारीरिक आदि प्रवृत्ति से होती क्रिया।

2 **आधिकरणिकी**—चाकू, छूरी, तलवार, कुदाल आदि से होने वाली क्रिया। इसके भी दो भेद हैं—

1 सयोजनाधिकरणिकी—टूटे हुए या विखरे हुए साधनो को ठीक–दूरस्त तथा एकत्रित करके काम के लायक वनाना। 2 निर्वतनाधिकरणिको–नये साधन वनवाकर उपयोग करना।

3 **प्राद्वेषिकी**—ईर्षा, द्वेप, मत्सरता आदि अशुभ परिणाम रूप।

इसके दो भेद है—1 जीव प्राद्वेशिकी–मनुष्य पशु आदि किसी भी जीव पर द्वेप–क्रोध आदि होना। 2 अजीव प्राद्वेशिकी वस्त्र, पात्र, मकान आदि अरुचिकर अजीव वस्तु पर द्वेप करना।

अथवा तीन भेद–1 स्व, 2 पर और 3 तदुभय पर अशुभ परिणाम लाना।

4 **पारितापनिकी**—किसी को मार–पीट कर अथवा कठोर वचन कह कर क्लेश पहु चाना, दु खी करना, कष्ट देना। इसके भी दो भेद है—1 'स्वहस्त पारितापनिकी'–अपने हाथ से या वचन से कष्ट पहु चाना।

2 'परहस्त पारितापनिकी'–दूसरो के द्वारा दु ख पहुचाना।

दूसरी प्रकार से इसके तीन भेद हे—1 स्वय क्लेशित-दु खी होना, 2 दूसरे को दु खी करना, 3 स्व और पर को दु ख देना।

5 **प्राणातिपातिकी**– प्राणो का नाश करने रूप क्रिया। इसके भी दो भेद है—1 स्वहस्त प्राणातिपातिकी और 2 परहस्त प्राणातिपातिकी। दूसरी प्रकार से इसके तीन भेद है—1 स्वात्म-घात, 2 अन्य जीवो की हिंसा और 3 अपनी तथा दूसरो की हिंसा करना।

6 **आरम्भिकी**—यह क्रिया दो प्रकार से होती है, जीव आरम्भिकी-छ कायो के जीवो का आरम्भ करने से। अजीव आरम्भिकी-कपडा, कागज, मृत कलेवर आदि अजीव वस्तुओ को नष्ट करने से होने वाली क्रिया।

7 **पारिग्रहिकी**—इसके भी दो भेद हैं–1 जीवपारिग्रहिकी-कुटुम्ब, परिवार, दास, दासी, गाय, भैंसादि चतुष्पद, शुकादि पक्षी धान्य, फल आदि स्थावर जीवो को ममत्व भाव से अपनाना 2 अजीवपारिग्रहिकी–सोना, चादी, मकान, वस्त्र, आभूषण, शयन आदि अजीव वस्तुओ पर ममत्व भाव रखना।

8 **मायाप्रत्यया**—छल, कपट से तथा कषाय के सद्भाव मे लगने वाली क्रिया। इसके दो भेद है—1 आत्मभाव वक्रताहृदय की कुटिलता-अन्तर मे कुछ और तथा बाहर मे कुछ और इस प्रकार आत्मा मे ठगाई के भाव होना। और 2 परभाव वक्रता-खोटे तोल, नाप आदि से दूसरो को हानि पहुचाना, विश्वास वस्तुओ जमा कर ठग लेना आदि। इसके भी दो भेद हैं—1अजीव मे किंचित भी विरति के भाव नही होना और 2 अजीव वस्तुओ मे विरति का भाव बिलकुल नही होना।

9 **अप्रत्याख्यानप्रत्यया**—विरति के अभाव मे यह क्रिया होती है।

10 **मिथ्यादर्शनप्रत्यया**—सम्यक्त्व के अभाव मे अथवा तत्व सम्बन्धी अश्रद्धा या कुश्रद्धा के कारण लगने वाली क्रिया। इसके भी दो भेद हैं—1 'न्यूनाधिक मिथ्यादर्शनप्रत्यया' श्री जिनेश्वर देव के कथन से कम अथवा अधिक श्रद्धान करना। और 2 'तदव्यतिरिक्त मिथ्यादर्शनप्रत्यया'—आत्मा का अस्तित्व ही नही मानना, अथवा 'न्यूनाधिक मानने रूप मिथ्यात्व के सिवाय

जीव को अजीव, अजीव को जीव आदि खोटी मान्यता रखना। इसमे अन्य सभी प्रकार के मिथ्यात्व का समावेश हो जाता है।

11 **दृष्टजा**—जीव अथवा अजीव पदार्थ को देखने से होने वाले राग-द्वेषमय परिणाम।

12 **स्पर्शजा**—जीव अथवा अजीव के स्पर्श से होने वाली राग-द्वेष की परिणति।

13 **प्रातीत्यिकी**—जीव और अजीव रूप बाह्य वस्तु के आश्रय से उत्पन्न राग-द्वेष और उससे होने वाली क्रिया।

14 **सामन्तोपनिपातिकी**—जीव और अजीव वस्तुओ के किये हुए सग्रह को देखकर लोग प्रशसा करे और उस प्रशसा को सुन कर हर्षित होना। इस प्रकार बहुत-से लोगो के द्वारा अपनी प्रशंसा सुनकर हर्षित होने से यह क्रिया लगती है। यह भी जीव और अजीव के भेद से दो प्रकार की होती है।

15 **स्वहस्तिकी**—अपने हाथ मे ग्रहण किए हुए जीव को मारने-पीटने रूप तथा अपने हाथ मे ग्रहण किये हुए जीव से दूसरे जीव को मारने-पीटने रूप। इसके दो भेद है—1 जीव स्वहस्तिकी और अजीव स्वहस्तिकी।

16 **नैसृष्टिकी**—किसी वस्तु को फेकने से होने वाली क्रिया इसके दो भेद है–1 जीव नैसृष्टिकी–खटमल यूका आदि को पटक देने, फेंकने या फव्वारे से जल छोडने आदि से होने वाली

क्रिया। और 2 अजीव नैसृष्टिकी-वारण फैकने, लकडी, वस्त्र आदि फैकने से होने वाली क्रिया।

17 **आज्ञापनिका**—दूसरे को आज्ञा देकर कराई जाने वाली क्रिया अथवा दूसरो के द्वारा लगवाई जाने वाली क्रिया। इसके दो भेद हैं-1 जीव आज्ञापनिका और 2 अजीव आज्ञा-पनिका।

18 **वैदारिणी**—विदारण करने से होने वाली क्रिया। यह भी जीव और अजीव के भेद से दो प्रकार की होती है।

अथवा-विचारणिका जीव और अजीव के व्यवहार-लेन-देन मे दो व्यक्तियो को समझा कर सौदा पटाने रूप (दलाल की तरह) या किसी को ठगने के लिए किसी वस्तु की प्रशसा करने से लगने वाली क्रिया।

19 **अनाभोगप्रत्यया**—अनजानपने से-उपयोग-शून्यता से होने वाली क्रिया। इसके दो भेद हैं-1 अनायुक्त दानता-वस्त्र-पात्रादि को बिना देखे ग्रहण करने और रखने रूप-अप्रति लेखना से।

2 अनायुक्त प्रमार्जनता-असावधानी से प्रतिलेखना प्रमार्जना करने से लगने वाली क्रिया।

20 **अनवकांक्षा प्रत्यया**—हिताहित की उपेक्षा से लगने वाली क्रिया। इसके स्व और पर-दो भेद है-1 अपने हित की अपेक्षा नही रख कर अपने शरीर आदि को हानि पहुचाने रूप और 2 परहित की अपेक्षा नही रख कर, दूसरो को हानि पहु-चाने रूप।

अथवा–इस लोक और परलोक की परवाह नही करके दोनों लोक बिगाडने रूप क्रिया ।

21 **प्रेम प्रत्यया**—राग से लगने वाली क्रिया । इसके भी दो भेद हैं-1 माया से और 2 लोभ से ।

22 **द्वेष प्रत्यया**—इसके भी दो भेद हैं-1 क्रोध से और 2 मान से ।

23 **प्रायोगिकी**—इसके तीन भेद हैं-1 मन का दुष्प्रयोग करना, 2 वचन का अशुभ प्रयोग करना और 3 काया का बुरा प्रयोग करने रूप क्रिया ।

24 **सामुदानिकी**—बहुत से लोग मिलकर एक साथ, एक ही प्रकार की क्रिया करे, अच्छे-बुरे दृश्य देखे, या आरम्भ जन्य कार्यो को साथ मिलकर करे, उसे सामुदानिकी क्रिया कहते हैं । इससे तीन भेद है-1 सान्तर सामुदानिकी, 2 निरन्तर सामुदानिकी और 3 तदुभय सामुदानिकी ।

25 **ईर्यापथिकी**—कषाय रहित जीवो को योग मात्र से होने वाली क्रिया । इसके तीन भेद-हैं 1 उपशांत मोह वीतराग, 2 क्षीण मोह वीतराग और 3 सयोगी केवली को लगने वाली क्रिया ।



आठ कर्म का थोकड़ा

श्री भगवती सूत्र शतक 8 उद्देशक 9 मे कर्मो की प्रकृतिबंध के 85 कारण बताये और श्री पन्नवणा सूत्र पद 23 उद्देशक 1 में कर्म-भोग के 93 कारण बताये है, वे इस प्रकार हैं—

कर्मों के नाम—1 ज्ञानावरणीय, 2 दर्शनावरणीय, 3 वेदनीय, 4 मोहनीय, 5 आयु, 6 नाम, 7 गोत्र और 8 अतराय।

परिभाषा—1 वस्तु के विशेष धर्म को जानना 'ज्ञान' कहलाता है और जिसके द्वारा ज्ञान ढांका जाय उसे 'ज्ञानावरणीय' कर्म कहते है। जैसे बादलो से सूर्य ढक जाता है।

2 वस्तु के सामान्य धर्म को जानना 'दर्शन' कहलाता है, उस दर्शन को आच्छादित करने वाले कर्म को 'दर्शनावरणीय कर्म' कहते है। जैसे द्वारपाल के रोक देने पर राजा के दर्शन नही हो पाते।

3 जिस कर्म के द्वारा साता (सुख) और असाता (दुःख) का वेदन (अनुभव) हो, उसे 'वेदनीय कर्म' कहते है जैसे शहद लिपटी तलवार के चाटने से सुख और जीभ कटने से दुःख होता है।

4 जिससे आत्मा मोहित (सत् और असत् के ज्ञान से शून्य) हो जाय, उसे 'मोहनीय कर्म' कहते हैं। जैसे मदिरा पीने से मनुष्य बे-भान हो जाता है।

5 जिस कर्म के उदय से जीव चार गतियो मे रुका रहे, उसे 'आयु कर्म कहते है' । जैसे बेडी मे बन्धने से अपराधी रुक जाता है, पराधीन हो जाता है ।

6 जिस कर्म से आत्मा, गति आदि नाना पर्यायो का अनुभव करे (शरीर आदि बने या जो जीव के अमुर्तत्व गुण को प्रगट न होने दे) उसे 'नाम कर्म कहते हैं । जैसे चित्रकार अनेक प्रकार के चित्र बनाता है ।

7 जिस कर्म के उदय से जीव, उच्च-नीच कुलो मे उत्पन्न हो, उसे 'गोत्र कर्म' कहते है । जैसे कुम्भकार छोटे–बड़े बरतन बनाता है ।

8 जिस कर्म से दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य (शक्ति) मे विघ्न उत्पन्न हो, उसे 'अन्तराय कर्म' कहते है । जैसे राजा की आज्ञा होने पर भी भडारी दान प्राप्ति मे बाधक होता है ।

बन्ध के प्रकार

बन्ध-मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग के निमित्त मे आत्म-प्रदेशो मे हलचल होती है, तब जिस क्षेत्र मे आत्म-प्रदेश है, उसी क्षेत्र मे रहे हुए अनन्तानन्त कर्म योग्य पुद्गल, जीव के साथ बन्ध को प्राप्त होते है । जीव और कर्म का यह बन्ध ठीक वैसा ही होता है, जैसा दूध और पानी का, अग्नि और लोहपिण्ड का । बन्ध के चार भेद हैं—1 प्रकृति बन्ध, 2 स्थिति बन्ध, 3 अनुभाग बन्ध और 4 प्रदेश बन्ध ।

1 प्रकृति बन्ध—जीव के द्वारा ग्रहण किये हुए कर्म–पुद्गलों मे भिन्न-भिन्न स्वभावो का होना ।

2 स्थिति बन्ध—जीव के द्वारा ग्रहण किये हुए कर्म-पुद्गलो मे जीव के साथ लगे रहने की काल मर्यादा ।

3 अनुभाग बन्ध—इसे 'अनुभाव बन्ध', 'अनुभव बन्ध' तथा 'रस बन्ध' भी कहते हैं। जीव के द्वारा ग्रहण किये हुए 'कर्म-पुद्गलो में फल देने की न्यूनाधिक शक्ति ।

4 प्रदेश बन्ध—जीव के साथ न्यूनाधिक परमाणु वाले कर्म-स्कन्धो का सम्वन्ध होना ।

चारो वन्धो का स्वरूप समझाने के लिए मोदक (लड्डू) का दृष्टांत दिया जाता है—

जैसे—सोठ, पीपर, कालीमिर्च आदि से वनाया हुआ लड्डू वायु-नाशक होता है। पित्त-नाशक और कफ-नाशक पदार्थो से वनाया हुआ मोदक पित्त और कफ–नाशक होता है। इसी प्रकार आत्मा द्वारा ग्रहण किये हुए कर्म–पुद्गलो मे से किन्ही मे ज्ञान गुण को आच्छादन करने की शक्ति होती है, किन्ही मे दर्शन-गुण, किन्ही मे आत्मा के आनन्द–गुण और किन्ही मे अनन्त शक्ति को घात करने की शक्ति होती है। इस प्रकार भिन्न-भिन्न कर्म-पुद्गलो मे भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रकृतियो का वन्ध होना 'प्रकृति-वन्ध' कहलाता हैं।

कोई मोदक एक सप्ताह, कोई एक पक्ष, कोई एक मास तक प्रभावशाली रहता है, इसके वाद ये विकृत हो जाते है। मोदकों की काल मर्यादा के समान कर्मो की भी कालमर्यादा होती है।

इसी को 'स्थिति बन्ध' कहते हैं। स्थिति पूर्ण होने पर कर्म आत्मा से पृथक हो जाते हैं।

कोई मादक रस में अधिक मधुर होते है, तो कोई कम। कोई रस मे अधिक कटु होते है, तो कोई कम। इस प्रकार मोदकों मे रसो की न्यूनाधिकता होती है, उसी प्रकार कुछ कर्म-पुद्गलों मे शुभ-रस अधिक और कुछ मे कम होता है। इसी प्रकार कर्मों मे तीव्र, तीव्रतर, तीव्रतम, और मन्द, मन्दतर, मन्दतम शुभाशुभ रसो का वन्ध होना—'रस वन्ध' है।

कोई मोदक परिणाम मे दो तोले का, कोई पांच तोले का और कोई पावभर का होता है। इसी प्रकार भिन्न-भिन्न कर्म-पुद्गलो मे न्यूनाधिक परमाणु होना।

जीव सख्यात, असख्यात और अनन्त परमाणुओ से वने हुए कार्मरा स्कन्ध को ग्रहण नहीं करता, परन्तु अनन्तानन्त परमाणु वाले स्कन्ध ग्रहण करता है।

प्रकृति-वन्ध और प्रदेश-वन्ध तो योग के निमित्त से होता है और स्थिति-वन्ध और अनुभाग-वन्ध कषाय के निमित्त से होता है।

कर्म-बन्ध के कारण और फल

ज्ञानवरणीय कर्म

ज्ञानावरणीय कर्म छह प्रकार से वन्धता है। यथा—

1 ज्ञान और ज्ञानी की प्रत्यनीकता (विरोध) करने से।

2 ज्ञान एवं ज्ञानदाता का अपलाप करने (लोप करने-छुपाने) स

3 ज्ञान प्राप्त करने को अन्तराय डालने (बाधक बनने) से
4 ज्ञान व ज्ञानी से द्वेष करके।
5 ज्ञान व ज्ञानी की आशातना करने से और
6 ज्ञानी से विसवाद (वितण्डावाद) करने से।

यह कर्म दस प्रकार से भोगा जाता है—

1 श्रोतइन्द्रिय का आवरण 2 चक्षु-इन्द्रिय का आवरण
3 घ्राण-इन्द्रिय का आवरण 4 रसना-इन्द्रिय का आवरण
5 स्पर्शनेन्द्रिय का आवरण 6 मतिज्ञान का आवरण
7 श्रुतज्ञान का आवरण 8 अवधिज्ञान का आवरण
9 मन.पर्यव ज्ञान का आवरण 10 केवल ज्ञान का आवरण।

दर्शनावरणीय कर्म—

दर्शनावरणीय कर्म छह प्रकार से वंधता है। यथा—

1 दर्शन और दर्शनी की प्रत्यनीकता (विरोध) करने से
2 दर्शन एव दर्शनी का अपलाव करने (लोप करने-छुपाने) से
3 दर्शन प्राप्त करने वाले को अन्तराय डालने (बाधक बनने) से
4 दर्शन व दर्शनी से द्वेष करने से
5 दर्शन व दर्शनी की आशातना करने मे और
6 दर्शनी से विसवाद (वितण्डावाद) करने से।

यह कर्म नौ प्रकार से भोगा जाता है—

(1) निद्रा, (2) निद्रानिद्रा, (3) प्रचला, (4) 'प्रचला-प्रचला'
(5) स्त्यानगृद्धि, (6) चक्षुदर्शनावरण, (7) अचक्षुदर्शनावरण
(8) अवधिदर्शनावरण और (9) केवलदर्शनावरण।

वेदनीय कर्म—

वेदनीय कर्म—22 प्रकार से बधता है एव 16 प्रकार से भोगा जाता है जिसके 2 भेद हैं-1 सातावेदनीय कर्म, 2 असाता वेदनीय कर्म। 3 साता-वेदनीय कर्म दस प्रकार से बधता है। यथा—1 पाणाणु-कपयाए-बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौरेन्द्रिय जीवो पर अनुकम्पा (दया) करने से, 2 भूयाणुकपयाए-वनस्पतिकाय के जीवो की अनुकम्पा करने से 3 जीवाणुकपयाए-पचेन्द्रिय जीवो की अनुकम्पा करने से 4 सत्ताणुकपयाए-पृथ्वीकायादि चार स्थावरकाय जीवो की अनुकपा करने से। [उपरोक्त प्राणो, भूतो, जीवो और सत्वो को] 5 दुख नही देने से 6 शोक उत्पन्न नहीं करने से। 7 नही झुराने, पीडित नही करने से, 8 आसू नही गिराने से, 9 नही पीटने से और 10 परिताप (दु.ख) उत्पन्न नही करने से।

इस कर्म का फल आठ प्रकार का है—

1 मनोज्ञ शब्द	2 मनोज्ञ रूप
3 मनोज्ञ गध	4 मनोज्ञ रस
5 मनोज्ञ स्पर्श	6 इच्छित सुख
7 अच्छे वचन और	8 शारीरिक सुख का प्राप्त होना

(ख) असातावेदनीय कर्म बारह प्रकार से बधता है, प्राण भूत जीव और सत्व को—

1 दुःख देने से	2 शोक कराने से
3 झुराने	4 आंसू गिराने से
5 मार-पीट करने	6 परिताप उत्पन्न करने
7 बहुत दु.ख देने	8 बहुत शोक कराने

9 बहुत झुराने 10 बहुत रुलाने

11 बहुत मार-पीट करने और 12 बहुत परिताप उत्पन्न करने से।

इसका फल आठ प्रकार का है—

1 अनमोज्ञ शब्द 2 अमनोज्ञ रूप

3 अनमोज्ञ गंध 4 अमनोज्ञ रस

5 अमनोज्ञ स्पर्श 6 मन का दु ख

7 वचन का दु'ख और 8 काया का दु.ख।

मोहनीय कर्म—

मोहनीय कर्म छह प्रकार से बधता है–1 तीव्र क्रोध करने से, 2 तीव्र मान करने से, 3 तीव्र माया करने से, 4 तीव्र लोभ करने से, 5 तीव्र राग करने से और, 6 तीव्र द्वेष करने से यह कर्म अट्ठाईस प्रकार से भोगा जाता है।

इनके मुख्य दो भेद हैं–1 दर्शन–मोहनीय और 2 चारित्र मोहनीय। दर्शन मोहनीय के तीन भेद है—

1 मिथ्यात्व मोहनीय 2 मिश्र-मोहनीय 3 सम्यक्त्व मोहनीय। चारित्र मोहनीय के भी दो भेद हैं—कषाय–मोहनीय और नोकषाय–मोहनीय। कषाय मोहनीय के सोलह भेद हैं–अनन्तानुबन्धी-1 क्रोध 2 मान 3 माया और 4 लोभ। अप्रत्याख्यानी 5 क्रोध 6 मान 7 माया और 8 लोभ। प्रत्याख्यानावरण 9 क्रोध 10 मान 11 माया और 12 लोभ। सज्वलन का 13 क्रोध 14 मान 15 माया और 16 लोभ।

नोकसाय ❀ के नौ भेद है–1 हास्य 2 रति 3 अरति 4 भय 5 शोक 6 जुगुप्सा 7 स्त्रीवेद 8 पुरुषवेद और 9 नपुंसक वेद–ये सब मिलाकर अट्ठाईस भेद हैं।

❀ कषायो को हास्य आदि उत्तेजित करते है और उनके सहचारी है, इसलिए उन्हे नो (ईषत) कहते हैं।

1 अनन्तानुबन्धी क्रोध–जैसे पत्थर पर दरार पडने से वह मिट नही सकती अथवा पर्वत के फटने से जो दरार होती है, उसका मिलना कठिन है, उसी प्रकार जो क्रोध शात न हो वह अनन्तानुबधीक्रोध है। अनन्तानुबंधी मान, जैसे पत्थर का खम्भा नमता नही, वैसे ही जो मान दूर न हो, उसे अनन्तानुबधी मान कहते हैं। अनन्तानुबधी माया, जैसे बिलकुल टेढी–मेढी कठिन बांस की जड का टेढापन मिट नही सकता, उसी प्रकार जो माया अमिट हो, उसे अनन्तानुबधी माया कहते है। अनन्तानुबधी लोभ, जैसे किरमिची रग का छूटना दुष्कर है, उसी प्रकार जो लोभ छूट न सके, उसे अनन्तानुबधी लोभ कहते है।

इस चौकडी से नरक गति मे जाना पडता है। स्थिति यावज्जीवन की है और सम्यक्त्व का घात करती है।

2 अप्रत्याख्यानी चौक के क्रोध का लक्षण–पानी सूखने से तालाब में जो दरार पड जाती है, वह आगामी वर्ष मे वर्षा होने पर मिटती है, उसी प्रकार जो क्रोध, विशेष परिश्रम से शांत हो, उसे अप्रत्याख्यानी क्रोध कहते है। मान–हाथी–दात के खम्भे की तरह जो बडी मुश्किल से झुकता हो, वह अप्रत्याख्यानी मान है। माया–मेढे के सीग की तरह जो कठिनाई से सीधा हो उसे

अप्रत्याख्यानावरण माया कहते हैं। लोभ–गाडी के ओंगन की तरह अति कष्ट से छुटे, वह अप्रत्याख्यानी लोभ है।

इस चौकड़ी से तिर्यंच गति होती है। इसकी स्थिति बारह महिने की है। वह श्रावक व्रत का घात करती है।

3 प्रत्याख्यानावरण चोक के क्रोध का लक्षण–जैसे रेत मे खिची हुई लकीर बहुत काल तक नही रहती, इसी प्रकार जो क्रोध बहुत काल तक न ठहरे, उसे प्रत्याख्यानावरण क्रोध कहते हैं। मान बेत के खम्भे की तरह जिस मान को झुकाने के लिए बहुत अधिक श्रम न करना पडे, उसे प्रत्याख्यानावरण मान कहते हैं। माया चलता हुआ बैल पेशाब करता है, तो टेढी लकीरे हो जाती है, उनका मिटना अति कष्टसाध्य नही होता, उसी प्रकार जिस माया का मिटना कठिन न हो, उसे प्रत्याख्यानावरण माया कहते है। लोभ–दीपक के काजल के समान जो लोभ थोडी कठिनाई से छूटे, उसे प्रत्याख्यानावरण लोभ कहते है। इससे चारो गतियो का बंध हो सकता है। स्थिति 4 महिने की है। यह सकल संयम का घात करती है।

4 सज्वलन चोक का स्वरूप–क्रोध-पानी मे खीची हुई लकीर के समान शीघ्र ही शात हो जाता है, वह सज्वलन क्रोध है। मान तिनके के खम्भे के समान शीघ्र ही नम जाय, उसे सज्वलन मान कहते है। माया–बास का छिलका जैसे सरलता से सीधा किया जा सकता है, उसी प्रकार माया बिना विशेष श्रम के दूर हो जाय, उसे संज्वलन माया कहते हैं। लोभ–हल्दी के रग के समान जो सहज ही छूट जाय, उसे सज्वलन लोभ कहते है।

इस चोकडी से देवगति होती है। क्रोध की स्थिति दो माह की, मान की एक माह की, माया की पन्द्रह दिन की और लोभ की अन्तर्मुहूर्त की है। यह कषाय यथाख्यात चारित्र का घात करती है (यह कषाय का सामान्य लक्षण है)।

आयु कर्म

आयुकर्म सोलह प्रकार से बधता है और चार प्रकार से भोगा जाता है—

☐ नरकायु चार प्रकार से बधता है—

1 महाआरम्भ करने से 2 महापरिग्रह करने से

3 मद्य-मांस का सेवन करने से

4 पचेंद्रिय जीवो की घात करने से और

☐ तिर्यंच का आयुष्य चार प्रकार से बधता से—

1 माया करने से 2 गूढ माया करने से

3 असत्य बोलने से 4 न्यूनाधिक नापने-तोलने से

☐ मनुष्य का आयुष्य चार प्रकार से बधता है—

1 प्रकृति की भद्रता से 2 प्रकृति की विनीतता से

3 दयाभाव रखने से और 4 मद-मत्सर भाव रहित होने से

☐ देवता का आयुष्य चार प्रकार से बधता है—

1 सराग सयम पालने से 2 देश सयम पालने से

3 बाल तपस्या करने से और 4 अकाम निर्जरा करने से।

☐ आयु कर्म चार प्रकार से भोगा जाता है—

1 नरकायु 2 तिर्यंचायु 3 मनुष्यायु और 3 देवायु।

नाम कर्म

☐ नामकर्म आठ प्रकार से बधता है। यह दो प्रकार का है—
1 शुभ नामकर्म और 2 अशुभ नामकर्म

☐ शुभ नामकर्म चार प्रकार से बधता है—
1 काया की सरलता 2 वचन की सरलता
3 मन की सरलता और 4 विसवाद रहितता से

☐ यह चौदह प्रकार से भोगा जाता है—

1 इष्ट शब्द 2 इष्ट रूप 3 इष्ट गध 4 इष्ट रस 5 इष्ट स्पर्श 6 इष्ट गति 7 इष्ट स्थिति 8 इष्ट लावण्य 9 इष्ट यशः कीर्ति 10 इष्ट उत्थान कर्म, वल, वीर्य, पुरुपाकार-पराक्रम 11 इष्ट स्वर 12 कान्त स्वर 13 प्रिय स्वर और 14 मनोज्ञ स्वर।

☐ अशुभ नामकर्म चार प्रकार से वधता है—
1 काया की वक्रता (वांकापन) 2 वचन की वक्रता
3 मन की वक्रता और 4 विसवाद योग युक्तता से।

☐ यह चौदह प्रकार से भोगा जाता है—
1 अनिष्ट शब्द 2 अनिष्ट रूप 3 अनिष्ट गध 4 अनिष्ट रस 5 अनिष्ट स्पर्श 6 अनिष्ट गति 7 अनिष्ट स्थिति 8 अनिष्ट लावण्य 9 अनिष्ट यश.कीर्ति 10 अनिष्ट उत्थान, कर्म, वल, वीर्य पुरुपाकार पराक्रम 11 हीन स्वर 12 दीन स्वर 13 अप्रिय स्त्र और 14 अनमोज्ञ स्वर से।

गोत्र कर्म

गोत्र कर्म सोलह प्रकार से बंधता है और सोलह प्रकार से भोगा जाता है। इसके दो भेद है—

1 उच्च गोत्र और   2 नीच गोत्र

उच्च गोत्र आठ प्रकार से बंधता है—

1 जाति का मद घमण्ड न करने से
2 कुल का मद न करने से
3 बल का मद न करने से
4 रूप का मद न करने से
5 तपस्या का मद न करने से
6 श्रुत (ज्ञान) का मद न करने से
7 लाभ का मद न करने से
8 ऐश्वर्य का मद न करने से

यह उच्च गोत्र आठ प्रकार से भोगा जाता है, अर्थात् इनका मद न करने से जाति, कुल, बल, रूप, तप, श्रुत, लाभ और ऐश्वर्य उच्च (श्रेष्ठ) पाता है।

नीच गोत्र कर्म आठ प्रकार से बंधता है और आठ प्रकार से भोगा जाता है-पूर्वोक्त जाति-कुल-बल रूप-तप-श्रुत लाभ और ऐश्वर्य का घमण्ड करने से बंधता है और इनका घमण्ड करने से नीच गोत्र की प्राप्ति होती है।

अन्तराय कर्म

अन्तराय कर्म पांच प्रकार से बंधता है और पांच प्रकार से भोगा जाता है। यह दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य में अन्तराय डालने से बंधता है और इससे पांचों अन्तराय की प्राप्ति होती है।

छः काय का थोकड़ा

सूत्र श्री पन्नवणा के छटे पद मे छःकाय का थोकडा चलता है, जिसके द्वार आठ है—

1 नाम द्वार 2 गोत्र द्वार 3 वर्ण द्वार
4 स्वभाव द्वार 5 सठाण द्वार 6 कुल कोडी द्वार
7 जन्म मरण द्वार 8 अल्प वहुत्व द्वार।

नाम द्वार

1 इन्दी थावर काय 2 वम्भी थावर काय
2 सीप्पी थावर काय 4 सुमति थावर काय
5 पयावच्च थावर काय 6 जगम काय।

गोत्र द्वार

1 पृथ्वी काय 2 अप्काय 3 तेउ काय
4 वायु काय 5 वनस्पति काय 6 त्रस काय

वर्ण द्वार

1 पृथ्वी काय का वर्ण पीला 2 अपकाय का लाल
3 तेउकाय का सफेद 4 वायु काय का नीला
5 वनस्पति काय का काला 6 त्रस काय का नाना प्रकार

स्वभाव द्वार

1 पृथ्वीकाय का स्वभाव कठोर
2 अपकाय का स्वभाव ढीला
3 तेउकाय का स्वभाव उष्ण
4 वायुकाय का स्वभाव वाजना
5 वनस्पति काय का एव त्रस काय का स्वभाव अनेक प्रकार का होता है।

संठाण द्वार

1 पृथ्वीकाय का संठाण चन्द्रमा या मसूर की दाल के समान ।

2 अपकाय का संठाण पानी के बुलबुले के समान ।

3 तेउकाय.का संठाण सुई के भारे के समान ।

4 वायुकाय का संठाण ध्वजा पताका के समान ।

5 वनस्पति काय व त्रसकाय का संठाण अनेक प्रकार का ।

कुल कोडी द्वार

पृथ्वीकाय की 12 लाख, अपकाय की 7 लाख, तेउकाय की 3 लाख, वायुकाय की 7 लाख, वनस्पति काय की 28 लाख बेइन्द्रिय की 7 लाख, तेइन्द्रिय की 8 लाख, चउरिन्द्रिय की 9 लाख, जलकर की 12॥ लाख, थलचर की 10 लाख, खेचर की 12 लाख, उपररिसर्प की 10 लाख, भूजपरिसर्प की 9 लाख, नारकी की 25 लाख, देवता की 26 लाख, मनुष्यों की 12 लाख, कुलकोडी एक करोड साटे सत्याणवे लाख।

जन्म-मरण द्वार

अहो भगवान् ! चार स्थावर के जीव एक अन्तरमुहूर्त में कितने जन्म मरण करते हैं।

जघन्य एक उत्कृष्ट 12,824

वनस्पति से तीन भेद–1 सूक्ष्म 2 साधारण 3 प्रत्येक

इन सबके जन्म मरण जघन्य 1, उत्कृष्ट सूक्ष्म वनस्पति के 65,536, साधारण वनस्पति के 32000, प्रत्येक वनस्पति के जीव 16,000 जन्म मरण करे, वेइन्द्रिय के 80 तेइन्द्रिय के 60 चऊरिन्द्रिय के 40 असन्नी, पचेन्द्रिय के 24 सन्नी पचेंद्रिय जघन्य उत्कृष्ट 1

अल्प बहुत्व द्वार

सबसे कम त्रस काय।

इससे तेउ काय असख्यात गुणी अधिक।

इससे पृथ्वीकाय विशेपाधिक।

इससे अपकाय विशेपाधिक।

इससे वायुकाय विशेषाधिक।

इससे अकाय सिद्ध भगवान् अनन्त गुण अधिक।

इससे वनस्पतिकाय अनन्त गुण अधिक।



श्रावक की दिनचर्या

जीवन निर्माण और विकास के लिए नियमितता और व्यवस्थितता होना अनिवार्य है। नियमित और व्यवस्थित जीवन विताने वाले व्यक्ति ही जीवन मे सफलता प्राप्त करते है। श्रावक का जीवन भी व्यवस्थित एव नियमित होना चाहिए। इसलिए ग्रन्थकारो ने श्रावक के दैनिक कर्त्तव्यो को बताने वाली दिनचर्या का वर्णन किया है। उस दिनचर्या के अनुसार अपनी दिनचर्या रखने वाला श्रावक जीवन ध्येय मे सफलता प्राप्त कर कल्याण और निर्वाण का अधिकारी होता है। श्रावक की दिनचर्या इस प्रकार बताई गई है—

ब्राह्मे मुहूर्ते उत्तिष्ठेत् परमेष्ठि स्तुति पठन्।
किं धर्मा किं कुलश्चास्मि किं व्रतोऽस्मीति च स्मरन्।

श्रावक को ब्रह्म मुहूर्त मे जागृत हो जाना चाहिए। कम से कम दो घडी रात्रि शेष रहते हुए अवश्य जागृत हो जाना चाहिए। ब्रह्म मुहूर्त का जागरण धार्मिक एव शारीरिक दृष्टि बिन्दुओ से अत्यन्त गुणकारी है। इस समय के वायुमण्डल मे ऐसे तत्व विद्यमान रहते हैं, जो तन और मन को, हृदय और मस्तिष्क को प्रेरणा, स्फूर्ति, उत्साह एव चेतना प्रदान करते है। जो व्यक्ति ऐसे समय को नीद मे गवा देते है वे अपने जीवन की सुनहरी घडियो को खो देते हैं। अत श्रावक को ब्रह्म मुहूर्त मे जागृत हो जाना चाहिए।

श्रावक को परमेष्ठी नमस्कार मन्त्र उच्चारण करते हुए जागना चाहिए तत्पश्चात् श्रावक का आत्म दर्शन और कर्त्तव्य

भोजन का समय होने पर नियमित रूप से सात्विक भोजन करे। भोजन (के) करने से पूर्व निम्न बातो का अनुष्ठान करना गृहस्थ का कर्त्तव्य बताया गया है, यथा—

जिण पूज्यो चिय दाण परिणय सभालणा उचित किच्च।
ठाणु व वे सो य तहा पच्चक्खाणस्स सभरण।

भोजन से पूर्व जिनेन्द्र भगवान् की स्तुति, साधु-साध्वी, सहधर्मी और अन्य योग्य क्षेत्र मे दान देना, अपने भाई-बन्धु आदि परिजनो को सार-सम्भाल, उचित कार्य करना, योग्य स्थान पर बैठना और प्रत्याख्यान का स्मरण करना, इत्यादि क्रियाए अवश्य होनी चाहिए। भोजन से पूर्व यह भावना करनी चाहिये कि यदि कोई साधु-मुनिराज, ब्रह्मचारी, विद्यार्थी या अन्य कोई पात्र व्यक्ति पधारे तो उन्हे भोजनादि देकर कृतार्थ होऊ। भोजन कर चुकने पर पुन: किसी प्रकार का प्रत्याख्यान करे।

मध्यान्हकाल मे पुन जिनदेव का स्मरण और स्तवन करे। तदनन्तर शिष्ट पुरुषो की सगति मे बैठकर तत्व चर्चा करे। तत्पश्चात् कौटुम्बिक और व्यावहारिक प्रवृत्ति के प्रति सजग बने। सूर्यास्त के पूर्व भोजनादि से निवृत्त होकर सान्ध्य विधि का पालन करे। धर्म स्थान मे जाकर मुनिवन्दन करे और दिन भर मे लगे हुए दोषो की शुद्धि के लिये प्रतिक्रमण करे। तदनन्तर स्वाध्याय-ध्यान रूप योग का अवलम्बन लेकर अन्त:करण को शुद्ध बनावे। ससार की अनित्यता का पर्यालोचन करे। मुक्ति की भावना करे। ससार के सब जीव सुखी

हो, सबका कल्याण हो और कोई दु खी न हो साथ ही मैत्री प्रमोद, कारूण्य और मध्यस्थ भावना का चिन्तन करे। तीन मनोरथों की प्रतिदिन भावना करे।

उक्त रीति से स्वाध्याय, भावना, चिंतन और मनोरथ करने पर वीतराग देव का स्मरण और कीर्तन करना चाहिए। अर्हन्त, अरिहन्त प्ररूपित धर्म, सिद्ध और साधुओ का शरण ग्रहण कर सागारी संथारा कर अठारह पापो का त्याग कर शुद्ध भावना रखते हुए शयन करना चाहिए। मध्य मे निद्रा भग होने पर काम-भोग की असारता, भूतकालीन श्रावको की दृढता तथा अन्य सद्भावनाओ से अन्त.करण को भावित करना चाहिए।

इस प्रकार अप्रमत्त रूप से दिनचर्या का पालन करने वाला गृहस्थ धीरे-धीरे चरित्र रूपी महल पर आरुढ होकर मुक्ति के अनुरूप और शाश्वत सौख्य का अधिकारी हो जाता है।

—जिण धम्मो से आभार



बारह भावनाएं

- ☐ अनित्य भावना — भरत महाराज ने भायी।
- ☐ अशरण भावना — अनाथी मुनि ने भायी।
- ☐ ससार भावना — धन्ना शालिभद्रजी ने भायी।
- ☐ एकत्व भावना — नमिराजऋषि ने भायी।
- ☐ अन्यत्व भावना — मृगापुत्रजी ने भायी।
- ☐ असूचि भावना — सनतकुमार चक्रवर्ती ने भायी।
- ☐ आश्रव भावना — समुद्रपाल मुनि ने भायी।
- ☐ सवर भावना — केशी, गौतम स्वामीजी ने भायी।
- ☐ निर्जरा भावना — अर्जुनमाली ने भायी।
- ☐ लोकस्वरुप भावना — शिवराजऋपि ने भायी।
- ☐ धर्म भावना — धर्मरुचि अणगार ने भायी।
- ☐ बोध बीज भावना — ऋषभदेव के 98 पुत्रो ने भायी।

विशेष तत्वज्ञान

लघु दण्डक जैन सिद्धात का बहुप्रचलित थोकडा है, इसमे 24 दण्डको का 26 विभिन्न द्वारो मे विश्लेषण दिया गया है, पूर्व मे अलग अलग विद्वान मुनिराजो ने इसको सुलभ एव आसान तरीके से समझने के लिए सकलन किया । इसी कडी मे विद्वान मुनिराजो द्वारा इसे और आसान बनाने का प्रयास किया गया है जो प्रस्तुत है ।

लघु दण्डक

26 द्वार—(1) शरीर द्वार (2) अवगाहना (3) सहनन (4) संस्थान (5) कषाय (6) सज्ञा (7) लेश्या (8) इन्द्रिय (9) समुद्घात (10) सज्ञी (11) वेद (12) पर्याप्ति (13) दृष्टि (14) दर्शन (15) ज्ञान (16) अज्ञान (17) योग (18) उपयोग (19) आहार (20) उत्पाद (21) स्थिति (22) समोहया असमोहया मरण (23) च्यवन (24) गति-आगति (25) प्राण (26) जोग ।

गाथा—

नेरइया असुराई, पुढवाई बेइन्द्रियादओ चेव ।
पचिन्द्रिय-तिय-नरा, वतर-जोइसिय-वेमाणी ॥1॥

संग्रहणी गाथाएं—

सारीरोगाहरण-संघयरण-संठारण-कसाय तह य हुति सन्नीग्रो

लेसिंदिय-समुग्घाए सन्नी वेए य पज्जती ॥1॥

दिट्ठी-दंसरण-नारणे जोगवग्रोगे तहा किमाहारे ।

उववाय ठिई समुग्घाय चवरण-गहरागई चेव पाणे जोगे ।

शरीर द्वार

[1] नारकी और देवता मे शरीर पावे 3 वैक्रिय, तैजस और कार्मरण ।

[2] चार स्थावर-पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वनस्पति और असन्नी मनुष्य इन पाचो मे शरीर पावे तीन-ग्रौदारिक, तैजस, कार्मरण ।

वायुकाय मे शरीर पावे चार—ग्रौदारिक, वैक्रिय, तैजस, और कार्मरण ।

[3] तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे शरीर पावे तीन-ग्रौदारिक, तैजस और कार्मरण ।

[4] सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे शरीर पावे चार—ग्रौदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मरण ।

[5] गर्भज मनुष्य मे शरीर पावे पाच—1 ग्रौदारिक, 2 वैक्रिय, 3 ग्राहारक, 4 तैजस और 5 कार्मरण ।

[6] युगलिक मनुष्यो के भेद-5 हैमवत, 5 हैरण्यवत, 5 हरिवास, 5 रम्यक्वास, 5 देवकुरु, 5 उतरकुरु और 56 अन्तर्द्वीप मे शरीर पावे तीन—1 ग्रौदारिक, 2 तैजस और 3 कार्मरण ।

[7] सिद्ध भगवान के शरीर नही, अशरीरी है ।

अवगाहना द्वार

पहली नारकी से सातवी नारकी तक भवधारिणी शरीर की अवगाहना, जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट पहली नारकी की 7।।। धनुष 6 अंगुल की होती है।

दूसरी नारकी	15।।	धनुप 12 अंगुल की
तीसरी "	31।	धनुप
चौथी "	62।।	धनुप
पाचवी "	125	धनुप
छठी "	250	धनुप
सातवी "	500	धनुप

उत्तर वैक्रिय करे, तो जघन्य अंगुल के सख्यातवे भाग उत्कृष्ट अपनी-अपनी अवगाहना से दुगुनी। जैसे सातवी नारकी की भवधारिणी शरीर की अवगाहना 500 धनुप की और उत्तर वैक्रिय करे तो 1000 धनुप की।

भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिपी तथा पहिले दूसरे देवलोक की अवगाहना जघन्य अंगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट 7 हाथ की। तीजे देवलोक से सर्वार्थ सिद्ध तक जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट इस प्रकार है।

तीसरे और चौथे देवलोक की	6	हाथ की
पाचवे-छठे "	5	"
सातवें-आठवें "	4	"
नौवें से बारहवें "	3	"
नवग्रैवेयक की "	2	"
पांच अनुत्तर विमान के "	1	"

उत्तर वैक्रिय करे, तो जघन्य अ गुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट बारहवे देवलोक तक लाख योजन की। नव ग्रैवेयक और अनुत्तर विमान के देव विक्रिया नही करते।

पृथ्वीकाय, अपकाय तेउकाय, वायुकाय और असन्नी मनुष्य इन पाचो की अवगाहना ज अ गुल के असख्यातवे भाग और उत्कृष्ट अगुल के असख्यातवे भाग। किन्तु ज से उत्कृष्ट असख्यात गुण है। वनस्पतिकाय को अवगाहना ज अंगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट 1000 योजन जाझेरी, कमल नाल अपेक्षा। वायुकाय की उत्तर वैक्रिय शरीर की अवगाहना ज और उ अ गुल के असख्यातवें भाग।

वेइन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अ गुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट 12 योजन।

तेइन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट 3 गाउ (कोस)।

चौइन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अ गुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट 3 गाउ।

असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय के पाच भेद—

जलचर, स्थलचर, खेचर, उरपरिसर्प और भुजपरिसर्प

जलचर की अवगाहना ज अंगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट 1000 योजन की।

स्थलचर की अवगाहना जघन्य अ गुल के असंख्यातवे भाग, उत्कृष्ट प्रत्येक (प्रथकत्व) गाउ।

खेचर की अवगाहना जघन्य अ गुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट प्रत्येक धनुप।

उरपरिसर्प की अवगाहना जघन्य अ गुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट प्रत्येक योजन ।

भुजपरिसर्प की अवगाहना जघन्य अ गुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट प्रत्येक धनुप ।

सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय के पांच भेद—

जलचर, स्थलचर, खेचर, उरपरिसर्प, भुजपरिसर्प । जलचर की अवगाहना ज अ गुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट 1000 योजन।

स्थलचर की अवगाहना ज अ गुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट 6 गाउ ।

खेचर की अवगाहना ज अ गुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट प्रत्येक धनुप ।

उरपरिसर्प की अवगाहना ज अंगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट 1000 योजन ।

भुजपरिसर्प की अवगाहना ज अ गुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट प्रत्येक गाउ ।

सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय वैक्रिय शरीर करे, तो अवगाहना ज. अ गुल के सख्यातवे भाग उत्कृष्ट पृथक सौ (ज. 200 उत्कृष्ट 900) योजन ।

गर्भज मनुष्यों की अवगाहना—ज. अंगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट तीन गाउ । काल के अनुसार अवसर्पिणी काल मे गर्भज मनुष्यो की उत्कृष्ट अवगाहना इस प्रकार है—

पहले आरे के प्रारम्भ मे तीन गाउ ।

पहला पूर्ण होने और दूसरे के प्रारम्भ मे दो गाउ ।

दूसरा पूर्ण होते और तीसरे के प्रारम्भ मे एक गाउ।
तीसरा पूर्ण होते और चौथे के प्रारम्भ मे 500 धनुष।
चौथा पूर्ण होते और पाचवे के प्रारम्भ मे 7 हाथ।
पाचवा पूर्ण होते और छठे के प्रारम्भ मे 1 हाथ।
छठा आरा पूर्ण होते एक हाथ से कम।

यह उत्कृष्ट अवगाहना है। जघन्य अवगाहना उत्पत्ति के समय अ गुल के असख्यातवे भाग हैं। पहले से तीसरे आरे तक के युगलिको की जघन्य अवगाहना उत्कृष्ट से देश न्युन (कुछ कम) होती है और उत्कृष्ट अवगाहना पूरी होती है।

उत्सर्पिणी काल की अवगाहना का क्रम इससे उलटा होता है। यदि मनुष्य वैक्रिय करे, तो अवगाहना ज अ गुल के असंख्यातवे भाग और उत्कृष्ट लाख योजन झाझेरी।

(6) युगलिक मनुष्य की अवगाहना—

हेमवत और हैरण्यवत मे एक गाउ।
हरिवास और सम्यक्वास मे दो गाउ।
देवकुरु और उतरकुरु मे तीन गाउ।
अन्तर्द्वीप मे—आठ सौ धनुष।

(7) इनमे जघन्य देशउणी और उत्कृष्ट परिपूर्ण होती है श्री सिद्ध भगवान् की अवगाहना—

आत्म प्रदेशो की अवगाहना जघन्य एक हाथ आठ अ गुल, मध्यम चार हाथ और सोलह अ गुल, उत्कृष्ट 333 धनुष 32 अ गुल।

संहनन

(1) नारकी और देवता मे सहनन नही। नारकी मे अशुभ पुद्गल परिणमे और देवो मे शुभ पुद्गल परिणमे।

(2) पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य मे एक सेवार्त्त सहनन है।

(3) तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे एक सेवार्त्त सहनन है।

(4) सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे सहनन पावे छहो—

1 वज्र ऋषभ-नाराच सहनन, 2 ऋषभ नाराच सहनन, 3 नाराच सहनन, 4 अर्ध नाराच सहनन, 5 कीलिका सहनन, 6 सेवार्त्त सहनन।

(5) गर्भज मनुष्य मे सहनन पावे छहो।

(6) युगलिक मनुष्य मे वज्र ऋषभ नाराच सहनन।

(7) सिद्ध भगवान् मे सहनन नही।

संस्थान

(1) नारकी के भवधारणीय शरीर और उत्तर वैक्रिय शरीर मे एक हुण्डक सस्थान है। देवो के भवधारणीय शरीर मे एक समचोरस सस्थान और उत्तर वैक्रिय-शरीर मे विविध प्रकार का सस्थान होता है।

(2) पांच स्थावर और असन्नी मनुष्य मे एक हुण्डक सस्थान है।

(3) तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे एक हुण्डक सस्थान होता है।

(4) सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे सस्थान पावे छहो—

1 समचतुरस्र सस्थान (समचोरस), 2 न्यग्रोधपरिमण्डल-सस्थान, 3 सादि सस्थान, 4 कुब्जक सस्थान, 5 वामन सस्थान, 6 हुण्डक सस्थान।

(5) गर्भज मनुष्य मे छहो सस्थान पाये जाते हैं।

(6) युगलिक मनुष्यो मे समचतुरस्र सस्थान पाया जाता है।

(7) सिद्ध भगवान् मे सस्थान नही।

कषाय

(1) नारकी और देवो के 14 दण्डको मे चारो कपाय होती है—

1 क्रोध, 2 मान, 3 माया और 4 लोभ।

(2) पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य में चारो कपाय होती है।

(3) तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे चारो कपाय पायी जाती है।

(4) सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे चारो कपाय पायी जाती है।

(5) गर्भज मनुष्य मे चारो कपाय पायी जाती है और अकपायी भी होते हैं।

(7) सिद्ध भगवान् अकपायी है।

संज्ञा

नारकी और देवों के 24 दण्डको मे चारों सन्ना पाई जाती है—

(1) आहार-सज्ञा (2) भय-सज्ञा (3) मैथुन-सज्ञा और परिग्रह-सज्ञा ।

[2] पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य में चारो सज्ञा पायी जाती है ।

[3] तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे चारो ही सज्ञा पायी जाती है ।

[4] सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे चारो ही सज्ञा पाई जाती है ।

[5] गर्भज मनुष्य मे चारो सज्ञा पाई जाती है और नो-सज्ञोप-युक्त भी होते हैं ।

[6] युगलिक मनुष्य मे चारों ही सज्ञा पाई जाती है ।

[7] सिद्ध भगवान् मे सज्ञा नही, नोसज्ञोपयुक्त है ।

लेश्या

[1] पहली और दूसरी नारकी मे एक कापोत लेश्या है ।
तीसरी नारकी मे कापोत और नील लेश्या ।
चौथी नारकी मे एक नील लेश्या ।
पाचवी नारकी मे नील और कृष्ण लेश्या ।
छठी नारकी मे कृष्ण लेश्या ।
सातवी नारकी में महा कृष्ण लेश्या ।
भवनपति और वाणव्यन्तर देव मे पहली चार लेश्या होती है—
[1] कृष्ण लेश्या [2] नील-लेश्या [3] कापोत लेश्या [4] तेजो लेश्या ।
ज्योतिषी तथा पहिले-दूसरे देवलोक मे तेजो लेश्या ।

तीसरे, चौथे और पाचवे देवलोक मे पद्म लेश्या।
छठे देवलोक से नवग्रेवेयक तक शुक्ल लेश्या।
पांच अनुत्तर विमान मे परम शुक्ल लेश्या।

[2] पृथ्वीकाय, अपकाय और वनस्पतिकाय—इन तीनो मे चार लेश्या पायी जाती है—कृष्ण लेश्या, नील लेश्या, कापोत लेश्या और तेजो लेश्या।
तेउकाय, वायुकाय और असन्नी मनुष्य मे तीन लेश्या पायी जाती है—कृष्ण लेश्या, नील लेश्या और कापोत लेश्या।

[3] तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे तीन लेश्या पायी जाती—कृष्ण लेश्या, नील लेश्या और कापोत लेश्या।

[4] सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे छहो लेश्या पाई जाती है।
[1] कृष्ण लेश्या [2] नील लेश्या [3] कापोत लेश्या
[4] तेजो लेश्या [5] पद्म लेश्या [6] शुक्ल लेश्या।

[5] गर्भज मनुष्य मे छहो लेश्या पाई जाती है और भी अलेशी होते है।

[6] युयलिक मनुष्य में चार लेश्या पाई जाती है।
कृष्ण, नील, कापोत और तेजो लेश्या।

[7] सिद्ध भगवान् मे लेश्या नही, अलेशी है।

इन्द्रिय

[1] नारकी और देवो मे पाचो इन्द्रिय—[1] श्रोत-इन्द्रिय
[2] चक्षु-इन्द्रिय [3] घ्राण-इन्द्रिय
[4] रसना-इन्द्रिय [4] स्पर्शन-इन्द्रिय

(2) पाच स्थावर मे एक स्पर्शनेन्द्रिय पावे और असन्नी मनुष्य मे पाचो ही इन्द्रिया पावे ।

(3) बेइन्द्रिय मे इन्द्रिय पावे दो—रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय । तेइन्द्रिय मे इन्द्रिय पावे तीन—घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय । चौइन्द्रिय मे चार इन्द्रिय पावे—चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय ।

असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे पाचो इन्द्रिय पावे ।

(4) सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे पाचो इन्द्रिय पाई जाती है ।

(5) गर्भज मनुष्य मे पाचो इन्द्रिय पावे और अनिन्द्रिय भी

(6) युगलिक मनुष्य मे पाचो इन्द्रिय पावे ।

(7) सिद्ध भगवान् इन्द्रिय नही अनिन्द्रिय है ।

समुद्घात

(1) नारकी मे समुद्घात चार—वेदनीय, कषाय, मारणांतिक और वैक्रिय । भवनपति से यावत् बारहवे देवलोक तक अनुक्रम से पाच समुद्घात । नवग्रैवेयक और पाच अनुत्तर विमान मे भी शक्ति से समुद्घात पाच पावे, परन्तु समुद्घात होती है तीन—वेदनीय, कषाय और मरणान्तिक । वैक्रिय और तैजस समुद्घात नही करते हैं ।

(2) चार स्थावर—पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वनस्पतिकाय और असन्नी मनुष्य, इन पाचो मे तीन समुद्घात पावे—वेदनीय समुद्घात, कषाय समुद्घात और मारणातिक समुद्घात । वायुकाय मे चार समुद्घात

पावे—वेदनीय समुद्घात, कषाय समुद्घात, मरणातिक समुद्घात और वैक्रिय समुद्घात।

[3] तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे समुद्घात पावे तीन—वेदनीय, कषाय और मारणातिक।

[4] सन्नी तिर्यच मे समुद्घात पाच—वेदनीय, कषाय, मारणातिक, वैक्रिय और तैजस्।

[5] गर्भज मनुष्य मे समुद्घात पावे सातो ही—
(1) वेदनीय, (2) कपाय (3) मारणातिक, (4) वैक्रिय (5) तैजस् (6) आहारक और (7) केवली।

[6] युगलिक मनुष्य मे समुद्घात पावे तीन—वेदनीय, कपाय और मारणान्तिक।

[7] सिद्ध भगवान् मे समुद्घात नही।

सन्नी

[1] पहली नारकी, भवनपति और वाणव्यन्तर मे सन्नी-असन्नी दोनो उत्पन्न होते है। असन्नी कुछ देर असन्नी रहकर फि सन्नी हो जाते हैं। दूसरी नारकी से सातवी नारको त ज्योतिषी से पाच अनुत्तर विमान तक सन्नी ही उत्प होते हैं।

[2] पांच स्थावर और असन्नी मनुष्य असन्नी है, सन्नी नहीं।

[3] तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यन्च पचेन्द्रिय—ये स सन्नी नही असन्नी है।

(4) सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय सन्नी है, असन्नी नही ।

(5) गर्भज मनुष्य सन्नी है, असन्नी नही ।

(6) युगलिक मनुष्य सन्नी ही है, असन्नी नही ।

(7) सिद्ध भगवान् सन्नी और असन्नी नही नोसन्नी नोअसन्नी है ।

वेद

(1) नारकी मे एक नपु सक वेद पावे । भवनपति, वाणव्यन्तर ज्योतिषी और पहिले–दूसरे देवलोक मे वेद पावे दो– स्त्री वेद और पुरुष वेद । तीसरे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध विमान तक एक पुरुष वेद ही होता है ।

(2) पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य मे एक नपु सक वेद पाया जाता है ।

(3) तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे एक नपुंसक वेद पाया जाता है ।

(4) सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे तीनो ही वेद पाये जाते हैं—
(1) स्त्री वेद (2) पुरुष वेद (3) नपु सक वेद ।

(5) गर्भज मनुष्य मे तीनो वेद पाये जाते हैं एव अवेदी भी ।

(6) युगलिया मनुष्य मे दो वेद—स्त्री वेद और पुरुष वेद ।

(7) सिद्ध भगवान् मे वेद नही अवेदी है ।

पर्याप्ति

(1) नारकी मे पर्याप्ति पावे छह और देव मे पर्याप्ति पावे पाच । क्योंकि भाषा और मन ये दोनों पर्याप्तिया

शामील, कुछ ही अन्तर से बन्धती है।

(2) पांच स्थावर मे चार पर्याप्ति पावे—आहार पर्याप्ति, शरीर पर्याप्ति, इन्द्रिय पर्याप्ति और श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति। असन्नी मनुष्य चौथी पर्याप्ति का अपर्याप्ता रहते हुए ही मर जाता हैं।

(3) तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे पर्याप्ति पावे पाच आहार पर्याप्ति शरीर पर्याप्ति, श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति और भापा पर्याप्ति।

(4) सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे छहो पर्याप्ति पाई जाती है।

(5) गर्भज मनुष्य मे छहो पर्याप्ति पाई जाती है।

(6) युगलिक मनुष्य मे छहो पर्याप्ति पाई जाती है।

(7) सिद्ध भगवान् पर्याप्ति और अपर्याप्ति नही, नो पर्याप्ति-नो अपर्याप्ति है।

दृष्टि

(1) नारकी और भवनपति से लगा कर ग्रैवेयक तक दृष्टि पावे तीनो ही—(1) सम्यग् दृष्टि, (2) मिथ्या दृष्टि, (3) सम्यग् मिथ्या दृष्टि (मिश्र)

पांच अनुतर विमान मे एक सम्यग् दृष्टि ही होता है।

(2) पान्च स्थावर और असन्नी मनुष्य मे एक मिथ्या दृष्टि।

(3) तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे दो दृष्टि—सम्यग् दृष्टि और मिथ्या दृष्टि।

(4) सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे तीनो ही दृष्टि पाई जाती है।

[5] गर्भज मनुष्य मे तीनो ही दृष्टि पाई जाती है।

[6] युगलिक मनुष्य मे–30 अकर्म भूमि मे दो दृष्टि–(1) सम्यग् दृष्टि और (2) मिथ्या दृष्टि और 56 अन्तर्दीपो मे एक मिथ्या दृष्टि ।

[7] सिद्ध भगवान मे एक सम्यग् दृष्टि ।

दर्शन

[1] नारकी और देवो मे दर्शन पावे तीन—चक्षुदर्शन अचक्षुदर्शन और अवधि दर्शन ।

[2] पाच स्थावर मे एक अचक्षुदर्शन होता है।
असन्नी मनुष्य मे—चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन ये दो दर्शन हैं।

[3] बेइन्द्रिय और तेइन्द्रिय मे एक अचक्षुदर्शन है।
चौइन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे दो दर्शन—चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन ।

[4] सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे दर्शन पावे-तीन चक्षुदर्शन अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन ।

[5] गर्भज मनुष्य मे दर्शन पावे चार—चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधि दर्शन और केवल दर्शन ।

[6] युगलिक मनुष्य मे दर्शन दो–चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन ।

[7] सिद्ध भगवान् मे एक केवलदर्शन ।

ज्ञान

[1] नारकी और देवो मे ज्ञान पावे तीन—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान ।
अज्ञान—नारकी और भवनपति मे नवग्रैवेयक तक अज्ञान

पावे तीन–मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान और विभगज्ञान। पाच अनुतर विमान मे अज्ञान नही होता।

[2] पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य मे ज्ञान नही होता, मति-अज्ञान और श्रुतअज्ञान–ये दो अज्ञान होते हैं।

[3] तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे दो ज्ञान—मतिज्ञान और श्रुतज्ञान।
दो अज्ञान मतिअज्ञान और श्रुतअज्ञान।

[4] सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे ज्ञान पावे तीन—मतिज्ञान श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान।
सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे तीनो ही अज्ञान पाये जाते है।

[5] गर्भज मनुष्य मे ज्ञान पावे पाच–मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधि-ज्ञान, मन पर्यव ज्ञान और केवलज्ञान।
अज्ञान–गर्भज मनुष्य मे तीनो ही अज्ञान पावे।

[6] 30 अकर्मभूमि मे दो ज्ञान–मतिज्ञान, श्रुतज्ञान।
30 अकर्मभूमि मे दो अज्ञान–मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान।
56 अन्तर्द्वीपो मे दो अज्ञान–मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान।

[7] सिद्ध भगवान् मे एक केवलज्ञान अज्ञान नही।

योग

[1] नारकी और देवो में योग पावे ग्यारह-4 मन के, 4 वचन के और 3 काया के (वैक्रिय योग, वैक्रिय मिश्र योग, और कार्मण काय योग)।

[2] चार स्थावर—पृथ्वीकाय अपकाय, तेउकाय, वनस्पतिकाय और असन्नी मनुष्य—इन पाचो मे योग पावे तीन—1 औदारिक–योग, 2 औदारिक मिश्र–योग, 3कार्मण काययोग।
वायुकाय मे योग पावे पांच—1 औदारिक योग, 2 औदारिक मिश्र योग, 3 वैक्रिय योग, 4 वैक्रिय-मिश्र योग और 5 कार्मण काय योग।

[3] तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे योग पावे चार-व्यवहार भाषा, औदारिक योग, औदारिक मिश्र योग और कार्मण काय योग ।

[4] सन्नी तिर्यंच मे योग पावे 13--चार मन के, चार वचन के और पाच काया के--औदारिक योग, औदारिक मिश्र योग, वैक्रिय योग, वैक्रिय मिश्र और कार्मण काय योग ।

[5] गर्भज मनुष्य मे पन्द्रह ही योग एव अयोगी भी । 4 मन के, 4 वचन के और 7 काया के–

4 मन के–1 सत्य मन योग, 2 असत्य मन योग, 3 मिश्र मन योग, 4 व्यवहार मन योग ।

4 वचन के–1 सत्य वचन योग, 2 असत्य वचन योग, 3 मिश्र वचन योग और 4 व्यवहार वचन योग ।

7 काया के–1 औदारिक योग, 2 औदारिक मिश्र योग, 3 वैक्रिय योग, 4 वैक्रिय मिश्र योग 5 आहारक योग, 6 आहारक मिश्र योग, 7 कार्मण काय योग ।

[6] युगलिक मनुष्य मे योग पावे ग्यारह–4 मन के, 4 वचन के और 3 काया के–1 औदारिक काय योग, 2 औदारिक मिश्र काय योग, 3 कार्मण काय योग ।

[7] सिद्ध भगवान् मे योग नहीं, अयोगी है ।

उपयोग

[1] नारकी और देवों मे नवग्रैवेयक तक उपयोग पावे नौ–तीन ज्ञान, तीन अज्ञान और तीन दर्शन । पांच अनुत्तर विमान मे उपयोग पावे छह–तीन ज्ञान और तीन दर्शन ।

[2] पाच स्थावरो मे उपयोग पावे तीन मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान और अचक्षुदर्शन ।
असन्नी मनुष्य मे उपयोग पावे चार—मति अज्ञान, श्रुत-अज्ञान, चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन ।

[3] वेइन्द्रिय और तेइन्द्रिय म उपयोग पावे पांच दो ज्ञान, दो अज्ञान और एक दर्शन-अचक्षुदर्शन । चोइन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे छह उपयोग-दो ज्ञान, दो अज्ञान और दो दर्शन ।

[4] सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे उपयोग पावे नव-3 ज्ञान, 3 अज्ञान और 3 दर्शन ।

[5] गर्भज मनुष्य मे उपयोग बारह पावे-पाच ज्ञान, तीन अज्ञान चार दर्शन—
पाच ज्ञान—1 मतिज्ञान, 2 श्रुतज्ञान, 3 अवधि ज्ञान, 4 मन.पर्यय ज्ञान, 5 केवल ज्ञान ।
तीन अज्ञान—1 मति अज्ञान, 2 श्रुत अज्ञान और 3 विभग ज्ञान ।
चार दर्शन—1 चक्षु दर्शन, 2 अचक्षुदर्शन, 3 अवधि दर्शन और 4 केवल दर्शन ।

[6] तीस अकर्म भूमि मे उपयोग पावे 6—दो ज्ञान, दो अज्ञान और दो दर्शन । 56 अन्तर्द्वीपा में उपयोग पावे चार—दो अज्ञान और दो दर्शन ।

[7] सिद्ध भगवान् मे दो उपयोग– केवल ज्ञान और केवल दर्शन ।

आहार

[1] नारकी और देव आहार लेव 288 भेद का । जिसमें दिशा की अपेक्षा नियमा छह दिशा का आहार लेवे ।

[2] पांच स्थावर 288 भेदो का आहार लेते हैं। जिसमे व्याघात हो, तो कदाचित् तीन दिशा का, कदाचित् चार दिशा का और कदाचित् पाच दिशा का। निर्व्याघात की अपेक्षा नियमा छह दिशा का। असन्नी मनुष्य आहार लेवे 288 भेद का, जिसमे दिशा की अपेक्षा नियमा छह दिशा का।

[3] विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय छह दिशाओ से 288 भेद का आहार लेते है।

[4] सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय 288 भेद का आहार लेते है। जिसमे दिशा की अपेक्षा नियम छह दिशा से।

[5] गर्भज मनुष्य छहो दिशा से 288 बोलो का आहार लेते है और अनाहारक भी होते हैं।

[6] युगलिक मनुष्य छहो दिशा से 288 बोलो का आहार लेते है।

[7] सिद्ध भगवान् आहारक नही, अनाहारक है।

उपपात

[1] नारकी और भवनपति मे लगाकर यावत् आठवे देवलोक तक एक समय मे ज 1–2–3 यावत् सख्यात उ असंख्यात उत्पन्न होवे। नौवे देवलोक से लगाकर यावत् सर्वार्थसिद्ध तक ज 1–2–3 उ संख्यात उत्पन्न होवे।

[2] चार स्थावर मे प्रति समय निरन्तर असख्यात उपजे और वनस्पतिकाय मे प्रति समय अनन्त उपजे सन्नी मनुष्य मे ज. 1-2-3 यावत् सख्यात उ. असख्यात उपजे।

[3] तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे एक समय

मे ज 1–2–3 यावत् सख्यात उत्कृष्ट असख्यात उत्पन्न होते है।

[4] सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय एक समय मे ज. 1–2–3 यावत् सख्यात उत्कृष्ट असख्यात उपजे ।

[5] गर्भज मनुष्य मे उपजात ज 1–2–3 उ. सख्यात उपजे।

[6] युगलिक मनुष्य मे ज उ सख्यात उत्पन्न होते है।

[7] सिद्ध भगवान् एक समय मे ज 1–2–3 उत्कृष्ट 108 सिद्ध होते है ।

स्थिति

समुच्चय नारकी के नेरिये एव देवता की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष की उत्कृष्ट 33 सागरोपम की ।

(1) पहली नारकी के नेरिये की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 सागरोपम की।

(2) दूसरी नारकी की ज एक सागरोपम उ 3 सागरोपम की

(3) तीसरी	"	" "	3	"	" 7	"
(4) चौथी	"	" "	7	"	" 10	"
(5) पाचवी	"	" "	10	"	" 17	"
(6) छठी	"	" "	17	"	" 22	"
(7) सातवी	"	" "	22	"	" 33	"

भवनपति देव की असुरकुमार जाति के दो इन्द्र है— चमरेन्द्र और बलिन्द्र ।

चमरेन्द्र के रहने की चमरचचा राजधानी, जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से दक्षिण दिशा मे अधोलोक मे है। बलिन्द्रजी के रहने [illegible]चचा राजधानी जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से उत्तर दिशा मे

अधोलोक मे है। चमरेन्द्रजी के भवनवासी देवो की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट एक सागरोपम और उनकी देवी की स्थिति ज दस हजार वर्ष, उ 3।। पल्योपम की। शेष नौ जाति के दक्षिण दिशा के भवनपति देवो की स्थिति ज दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट 1।। पल्योपम और उनकी देवी की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट पौन ।।। पल्योपम।

बलिन्द्र जी के भवनवासी देवो की स्थिति ज. दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक सागरोपम झाझेरी। उनकी देवो की स्थिति ज दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट 4।। पल्योपम। शेष नौ जाति उत्तर–दिशा वाले भवनपति देवो की स्थिति ज दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट देशोन दो पल्योपम। उनकी देवी की स्थिति ज. दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट देशोन एक पल्योपम।

वाणव्यन्तर देवो की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट एक पल्योपम। उनकी देवी की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट अर्द्ध पल्योपम।

ज्योतिषी देवों की स्थिति

ज्योतिषियो के पाच भेद है—

1 चन्द्र, 2 सूर्य, 3 ग्रह 4 नक्षत्र और 5 तारा।

चन्द्र–विमानवासी देवो की स्थिति ज पाव पल्योपम उ. 1 पल्योपम और 1 लाख वर्ष। उनकी देवियों की स्थिति ज. पाव पल्योपम उ आधा पल्योपम और 50 हजार वर्ष।

सूर्य—विमानवासी देवो की स्थिति ज पाव पल्योपम उ 1 पल्योपम और एक हजार वर्ष। उनकी देवियो की स्थिति ज. पाव पल्योपम उत्कृष्ट आधा पल्योपम और 500 वर्ष।

ग्रह—विमानवासी देवो की स्थिति ज पाव पल्योपम उत्कृस्ट एक पल्योपम । उनकी देवियो की स्थिति ज पाव पल्योपम उ आधा पल्योपम ।

नक्षत्र—विमानवासी देवो की स्थिति ज. पाव पल्योपम उ आधा पल्योपम और उनकी देवियो की स्थिति ज पाव पल्योपम उ पाव पल्योपम झाझेरी ।

तारा—विमानवासी देवो की स्थिति ज. पल्योपम के आठवें भाग उ पाव पल्योपम । उनकी देवियो की स्थिति ज पल्योपम के आठवे भाग उ पल्योपम के आठवे भाग झाझेरी ।

वैमानिक देवों की स्थिति

(1) पहिले देवलोक के देवो की स्थिति ज 1 पल्योपम, उ सागरोपम । वहा देविया दो प्रकार की है—

(1)परीग्रहीता और (2) अपरिग्रहीता । परीग्रहीता देविय की स्थिति ज एक पल्योपम, उ 7 पल्योपम । अपरि ग्रहीता देवियो की स्थिति ज 1 पल्योपम उ 50 पल्योपम

[2] दूसरे देवलोक के देवो की स्थिति ज 1 पल्योपम झाझेर उ. 2 सागरोपम झाझेरी । देविया दो प्रकार की है—परि ग्रहीता और अपरिग्रहीता । परिग्रहीता देवियो की स्थिति ज 1 पल्योपम झाझेरो, उ 9 पल्योपम । अपरिग्रहीता देवियो की स्थिति ज 1 पल्योपम उ. 55 पल्योपम ।

[3] तीसरे देवलोक के देवो की स्थिति ज. 2 सागरोपम उ 7 सागरोपम ।

[4] चौथे देवलोक के देवो की स्थिति ज 2 सागरोपम झाझेरी उ 7 सागरोपम झाझेरी ।

[5] पांचवें देवलोक के देवों की स्थिति ज.	7	सागरोपम उ.	10	सागरोपम
[6] छठे देवलोक के देवों की स्थिति ज	10	"	" 14	"
[7] सातवें देवलोक के देवों की स्थिति ज	14	"	" 17	"
[8] आठवें देवलोक के देवों की स्थिति ज	17	"	" 18	"
[9] नौवें देवलोक के देवों की स्थिति ज	18	"	" 19	"
[10] दसवें देवलोक के देवों की स्थिति ज.	19	"	" 20	"
[11] ग्यारवें देवलोक के देवों की स्थिति ज	20	"	" 21	"
[12] बारहवें देवलोक के देवों की स्थिति ज.	21	"	" 22	"
[13] पहले ग्रैवेयक के देवों की स्थिति ज	22	"	" 23	"
[14] दूसरे ग्रैवेयक के देवों की स्थिति ज	23	"	" 24	"
[15] तीसरे ग्रैवेयक के देवों की स्थिति ज.	24	"	" 25	"
[16] चौथे ग्रैवेयक के देवों की स्थिति ज	25	"	" 26	"
[17] पांचवें ग्रैवेयक के देवों की स्थिति ज	26	"	" 27	"
[18] छठे ग्रैवेयक के देवों की स्थिति ज	27	"	" 28	"
[19] सातवें ग्रैवेयक के देवों की स्थिति ज.	28	"	" 29	"
[20] आठवें ग्रैवेयक के देवों की स्थिति ज.	29	"	" 30	"
[21] नौवें ग्रैवेयक के देवों की स्थिति ज.	30	"	" 31	"
[22] चार अनुत्तर विमान के देवों की स्थिति ज	31	"	" 33	"

[23] सर्वार्थ सिद्ध विमान देवों की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट 33 सागरोपम।

प्रथ्वीकाय की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त की उ. 22000 वर्ष की।
अप्काय की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त की उ 7000 वर्ष की।
तेउकाय की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त की उ तीन अहोरात्री।
वायुकाय की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त की उ. 3000 वर्ष की।
वनस्पतिकाय की स्थिति ज. अन्तर्मुहूर्त की उ 1000 वर्ष की।
असन्नी मनुष्य की जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की।
बेइन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 12 वर्ष।
तेइन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 49 अहोरात्री।
चौइन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट छहमहिने।

असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय के पाच भेद-

जलचर, स्थलचर, खेचर, उरपरिसर्प और भुजपरिसर्प।
जलचर की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त, उ एक करोड पूर्व।
स्थलचर की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त उ 84 हजार वर्ष।
खेचर की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त उ 72 हजार वर्ष।
उरपरिसर्प की स्थिति ज. अन्तर्मुहूर्त, उ 53 हजार वर्ष।
भुजपरिसर्प की स्थिति ज. अन्तर्मुहूर्त उ 42 हजार वर्ष।

सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय के पाच भेद-

जलचर, स्थलचर, खेचर, उरपरिसर्प और भुजपरिसर्प।
जलचर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट एक करोड पूर्व।
स्थलचर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन पल्योपम।
खेचर की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त, उ पल्योपम के असख्यातवे भाग
उरपरिसर्प की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त उ एक करोड पूर्व।
भुजपरिसर्प की स्थिति ज. अन्तर्मुहूर्त उ एक करोड पूर्व।
—— मनुष्य की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त उ. तीन पल्योपम।

काल की अपेक्षा अवसर्पिणी काल मे—

पहले आरे के प्रारम्भ मे 3 पल्योपम ।
पहले उतरते और दूसरा लगते 2 पल्योपम ।
दूसरा उतरते और तीसरा लगते 1 पल्योपम ।
तीसरा उतरते और चौथा लगते 1 करोड पूर्व ।
चौथा उतरते और पाचवा लगते एक सौ वर्ष झाझेरी ।
पाचवा उतरते, छठा लगते 20 वर्ष ।
छठा आरा उतरते 16 वर्ष ।

यह उत्कृष्ट स्थिति बतलाई है । तीसरे आरे तक के मनुष्यो की जघन्य स्थिति उत्कृष्ट से देश उणी होती है शेष आरो मे ज अन्तर्मुहूर्त की । उत्सर्पिणी काल मे उससे उलटी होती है ।

युगलिक मनुष्य की स्थिति—

5 देवकुरु 5 उत्तरकुरु की स्थिति तीन पल्योपम ।
5 हरिवास 5 रम्यक्वास की स्थिति दो पल्योपम ।
5 हेमवत 5 हैरण्यवत की स्थिति एक पल्योपम ।
56 अन्तर्द्वीप की स्थिति पल्योपम के असंख्यातवें भाग उनमें जघन्य स्थिति कुछ कम होती है और उत्कृष्ट पूर्ण होती है ।

सिद्ध भगवान् की स्थिति—

एक सिद्ध भगवान् की अपेक्षा सादि अनन्त और सभी भगवंतो की अपेक्षा अनादि अनन्त ।

समोहया असमोहया मरण

(1) नारकी और देव दोनो प्रकार के मरण से मरते हैं।

(2) पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य दोनो प्रकार के मरण मरते हैं।

(3) तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय दोनो प्रकार के मरण मरते हैं।

(4) सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय दोनो प्रकार के मरण मरते हैं।

(5) गर्भज मनुष्य दोनो प्रकार के मरण मरते हैं।

(6) युगलिक मनुष्य दोनों प्रकार से मृत्यु होती है।

(7) सिद्ध भगवान मे मरण नही।

च्यवन

(1) नारकी और भवनपति देव से लगाकर आठवें देवलोक तक एक समय मे ज 1-2-3 यावत् सख्यात् उत्कृष्ट असख्यात च्यवें। नौवे देवलोक से लगाकर सर्वार्थ सिद्ध विमान तक, एक समय मे ज. 1-2-3 उत्कृष्ट सख्यात च्यवे।

(2) पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य—जिस प्रकार उपपात द्वार (19वा) है, इसी प्रकार च्यवन द्वार हैं।

(3) विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे एक समय में जघन्य 1-2-3 यावत् सख्याता उत्कृष्ट असख्याता मरते हैं।

(4) सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय एक समय मे ज 1-2-3 यावत् संख्यात्, उत्कृष्ट असख्यात मरते हैं।

(5) गर्भज मनुष्य ज 1,2,3, उ. सख्यात मरते है।

(6) युगलिक मनुष्य ज 1,2,3, उ सख्यात मरते है।

(7) सिद्ध भगवान मे च्यवन (मरण) नही।

गति

(1) पहली नारकी से लगा कर 6 नारकी तक दो गतियो से आवे और दो गतियो मे जावें–तिर्यच गति और मनुष्य गति। दण्डक की अपेक्षा दो दण्डक से आवे और दो दण्डक मे जावे (20-21) तिर्यच पचेन्द्रिय और मनुष्य दण्डक। सातवी नारकी मे दो गतियो से आवे—तिर्यंच गति और मनुष्य गति से और एक तिर्यच गति मे जावे। दण्डक की अपेक्षा दो दण्डको से आवे (20-21) वा दण्डक और एक तिर्यच पचेन्द्रिय (20 वां दण्डक) में जावे। भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और पहिले दूसरे देवलोक के देव, दो गतियो से आवे और दो गतियों में जावे– तिर्यंच गति और मनुष्य गति। दण्डक की अपेक्षा दो दण्डक से आवे, तिर्यच पचेन्द्रिय से और मनुष्य से और पांच दण्डक में जावे—पृथ्वीकाय, अपकाय, वनस्पतिकाय, तिर्यच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में। तीसरे देवलोक से लगाकर आठवें देवलोक तक दो गति से आवे एव दो गति मे जावे एव दण्डक की अपेक्षा दो दण्डक से आवे दो दण्डक (मनुष्य तिर्यच) मे जावे नौवे देवलोक से लगाकर सर्वार्थ सिद्ध विमान के देव एक मनुष्य गति मे आवे और उसी गति

मे जावे । दण्डक की अपेक्षा एक दण्डक से आवे और एक दण्डक मे जावे–मनुष्य का दण्डक ।

(2) पृथ्वीकाय,अपकाय और वनस्पति कायमे तीन गति से आवे-तिर्यंचगति, मनुष्य गति और देव गति से और दो गति मे जावे–तिर्यंच गति और मनुष्य गति मे । दण्डक की अपेक्षा 23 दण्डक से आवे (10 भवनपति, 5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय 1 तिर्यंच पचेन्द्रिय, 1 मनुष्य, 1 वाणव्यन्तर, 1 ज्योतिपी, 1 वैमानिक से) और दस दण्डक मे जावे—(5 स्थावर, 3 त्रिकलेन्द्रिय, 1 तिर्यंच पचेन्द्रिय, 1 मनुष्य मे) ।

तेउकाय और वायुकाय मे दो गति से आवे (तिर्यंच और मनुष्य गति से) और एक तिर्यंच गति मे जावे । दण्डक की अपेक्षा दस दण्डक से आवे (औदारिक का दस दण्डक उपरोक्त) 9 दण्डक मे जावे । (5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय और 1 तिर्यंच पचेन्द्रिय मे) और असन्नी मनुष्य दो गति से आवे तिर्यंच गति और मनुष्य गति से, और दो गति मे जावे तिर्यंच गति और मनुष्य गति मे । दण्डक की अपेक्षा आठ दण्डक से आवे (एक पृथ्वीकाय, 1 अपकाय, 1 वनस्पतिकाय, 1 तिर्यंच पचेन्द्रिय, 1 मनुष्य से)

दस दण्डक मे जावे उपरोक्त औदारिक मे ।

(3) तीन विकलेन्द्रिय मे दो गति से आवे और दो गति मे जावे तिर्यंच गति और मनुष्य गति । दण्डक की अपेक्षा दस दण्डक से आवे और दस दण्डक मे जावे । दस दण्डक औदारिक के है । असन्नी तिर्यंच मे दो गति से आवे तिर्यच गति और मनुष्य गति से और चार गतिमे जावे--नरक, तिर्यच, मनुष्य और देवगति मे और दण्डक की अपेक्षा दस दण्डक से

आवे-(दस दण्डक औदारिक का) और 22 दण्डक मे जावे-
(1 नारकी, 10 भवनपति, 1 वाणव्यन्तर, 5 स्थावर, 3
विकलेन्द्रिय, 1 तिर्यंच पचेन्द्रिय और 1 मनुष्य)।

(4) सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय चारों गति और 24 दण्डक से आते हैं और चारो गति चौबीस दण्डक मे जाते है।

(5) गर्भज मनुष्य—आगति—चारो गति और 22 दण्डक से आते है।
गति (1) चारो गति और दण्डक 24 मे।
और (2) सिद्ध गति मे जाते हैं।

(6) युगलिक मनुष्य—आगति—2 तिर्यंच और मनुष्य गति से आते हैं।
गति—एक देव गति मे जाते हैं।
दण्डक की अपेक्षा—तीस अकर्मभूमि की आगति—दो दण्डक
से—मनुष्य और तिर्यंच से। गति दण्डक 13 मे—10 भवन-
पति, 1 वाणव्यन्तर, 1 ज्योतिषी और 1 वैमानिक में।
छप्पन अन्तर्द्वीपो मे 2 दण्डक से आवे और 11 दण्डक
मे—10 भवनपति और 1 व्यन्तर मे जावे।

(7) सिद्ध भगवान् मे आगति एक मनुष्य गति और एक दण्डक से। और गति नही।

प्राण

(1) नारकी और देवो मे प्राण पावे दस।

(2) पांच स्थावर मे प्राण पावे चार (स्पर्शनेन्द्रिय बलप्राण, काय बल प्राण, श्वासोच्छ्वास बलप्राण और आयुष्य बलप्राण) असन्नी मनुष्य मे प्राण पावे कुछ कम (ऊणा)

आठ पाच इन्द्रिय के काय वलप्राण, श्वासोच्छ्वास वलप्राण और आयुष्य बलप्राण ।

(3) बेइन्द्रिय मे प्राण पावे छह—रसनेन्द्रिय प्राण, स्पर्शनेन्द्रिय वलप्राण, वचन बलप्राण, काय बलप्राण, श्वासोच्छ्वास वलप्राण और आयुष्य बलप्राण ।

तेइन्द्रिय मे प्राण पावे सात—घ्राणेन्द्रिय वलप्राण, रसनेन्द्रिय वलप्राण, स्पर्शनेन्द्रिय वलप्राण, वचन वलप्राण काय बलप्राण, श्वासोच्छ्वास वलप्राण और आयुष्य बलप्राण ।

चौरिन्द्रय मे प्राण पावे आठ—चक्षुरिन्द्रिय वलप्राण और सात पूर्वोक्त ।

असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे प्राण पावे नव-श्रोतेन्द्रिय वल-प्राण और आठ पूर्वोक्त ।

(4) सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे प्राण पावे दसो ही —
(1) श्रोतेन्द्रिय वलप्राण (2) चक्षुरिन्द्रिय बलप्राण (3) घ्राणेन्द्रिय वलप्राण (4) रसनेन्द्रिय वलप्राण (6) मनो वलप्राण (7) वचन वलप्राण (8) काय बलप्राण (9) श्वासोच्छ्वास वलप्राण और (10) आयुष्य वलप्राण ।

(5) गर्भज मनुष्य मे प्राण पावे दसो ही ।

(6) युगलिक मनुष्य मे प्राण पावे दसो ही ।

(7) सिद्ध भगवान मे द्रव्य प्राण नही भाव प्राण चार है। (ज्ञान, दर्शन, सुख और आत्म शान्ति) ।

योग

(1) नारकी और देवो मे योग पावे तीनो ही—

(1) मन योग (2) वचन योग (3) काय योग ।

(2) पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य मे योग पावे एक काय योग ।

(3) तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे योग पावे दो—वचन योग और काय योग ।

(4) सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे योग पावे तीनो ही ।

(5) गर्भज मनुष्य मे योग पावे तीनो और अयोगी भी ।

(6) युगलिक मनुष्य मे योग पावे तीनो ही ।

(7) सिद्ध भगवान् मे योग नही, अयोगी है ।

लघु दण्डक समाप्त

गुणस्थान स्वरूप

गुणस्थानो* पर अट्ठाईस द्वार है । वे इस प्रकार है—1 नाम 2 लक्षण 3 स्थिति 4 क्रिया 5 सत्ता 6 बंध 7 उदय 8 उदीरणा 9 निर्जरा 10 भाव 11 कारण 12 परीषह 13 आत्मा 14 जीव के भेद 15 गुणस्थान 16 योग 17 उपयोग 18 लेश्या 19 हेतु 20 मार्गणा 21 ध्यान 22 दण्डक 23 जीव-योनि 24 निमित्त 25 चारित्र 26 समकित 27 अन्तर और 28 अल्पबहुत्व ।

---

*आत्मा में ज्ञान-दर्शन-चारित्र आदि गुणों की शुद्धि-अशुद्धि और उत्कर्ष-अपकर्ष अवस्था के वर्गीकरण को 'गुणस्थान' कहते हैं ।

1 नाम द्वार

गुणस्थानो के नाम–1 मिथ्यात्व 2 सास्वादन 3 मिश्र 4 अविरत सम्यग्दृष्टि 5 देशविरत 6 प्रमत्त-सयत 7 अप्रमत्त-सयत 8 निवृत्ति-वादर* 9 अनिवृत्ति-वादर+10 सूक्ष्म–सम्पराय 11 उपशान्त मोहनीय 12 क्षीण-मोहनीय 13 सयोगी केवली और 14 अयोगी केवली।

2 लक्षण द्वार

1 मिथ्यात्व गुणस्थान का लक्षण-जिनेश्वर भगवान् की वाणी न्यूनाधिक या विपरीत श्रद्धे या प्ररूपे जिन-मार्ग पर दुष्ट परिणाम रखे, हिंसा मे धर्म माने या प्ररूपे, कुगुरु, कुदेव और कुशास्त्र पर आस्था रखे। अथवा तत्व श्रद्धा का अभाव जीव के ऐसे भाव को पहला–'मिथ्यात्व गुणस्थान' कहते हैं।

पहले गुणस्थान का फल-कर्म रूपी डडे से आत्मा रूपी गेंद, चार गति चौवीस दण्डक और चौरासी लाख जीव-योनियो मे वारम्बार परिभ्रमण कर दु ख भोगती रहती है।

2 दूसरे गुणस्थान का लक्षण-सम्यक्त्व का आस्वाद मात्र रहना। जैसे–किसी ने खीर का भोजन किया और वाद में वमन कर दिया, तो उसे कुछ गुडचटा का स्वाद रहता है। इसी प्रकार प्राप्त सम्यक्त्व छोडकर मिथ्यात्व मे प्रवेश करने की दशा मे जो आस्था होती है, उसे 'सास्वादन' गुणस्थान कहते हैं। अथवा जैसे-घटे से गभीर शब्द निकल चुकने के वाद उसका

*निवृत्ति वादर चारित्र का अपूर्वकरण अर्थात् जो वादर दर्शन–मोह से निवृत हो गए।

+अनिवृत्ति वादर-जो वादर चारित्र-मोह से निवृत नही हुए।

रणकार (प्रतिध्वनि) रह जाती है, उसके समान, अथवा आत्मा रूपी आम्र-वृक्ष की परिणाम रूपी डाली से, मोह* रूपी वायु चलने से, समकित रूपी फल टूट गया, परन्तु पृथ्वी पर नहीं पहुचा। वह बीच ही मे है, तब तक के परिणामो को 'सास्वादन गुणस्थान' कहते हैं।

दूसरे गुणस्थान का फल-जैसे किसी को एक करोड रुपया ऋण देना था, उसने उसमे से निन्यानवे लाख निन्यानवे हजार नो सौ साढे निन्यानवे (99,99 999 ।।) तो चुका दिये, केवल आधा रुपया देना शेष रहा। उलटे का सुलटा हुआ, कृष्णपक्षी से शुक्लपक्षी हुआ, इसी भांति दूसरे गुणस्थान वाले जीव का उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पुदगल-परावर्तन ससार भोगना शेष रहा।

3 तीसरे गुणस्थान का लक्षण-सम्यक्त्व और मिथ्यात्व मे मिश्रित, श्रीखड के समान मीठे और खट्टे स्वाद जैसा। दृष्टात-वसन्तपुर नामक नगर के बाहर कोई महा गुणधारी मुनिराज पधारे। कोई श्रावक वन्दना करने गया। रास्ते मे दुकान पर सम्यग्-मिथ्यादृष्टि वाले सेठजी बैठे थे। उन्होंने पूछा— भाई ! आप कहा जाते है ?' उसने उत्तर दिया— भाई ! महान् मुनिराज पधारे है, सो मैं वंदना करने जाता हूं।' सेठजी बोले—'मैं भी चलता हूं।" इतने में उनका मिथ्यात्वी गुमाश्ता बोला—"अजी, आप कहां जाते है ? परदेश से जो चिट्ठियां आयी है, उनका उत्तर देना है।' ऐसा सुनकर सेठजी काम मे लग गये। वह श्रावक जब मुनिदर्शन करके लौटा तो मिश्र गुणस्थान वाले सेठ बोले—"भाई ! तुम तो वन्दना कर आये, मैं तो अब जाता हूं।" ऐसा कहकर वह वन्दना करने गया। जब वह वहा पहुचा,

* अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया या लोभ मे से किसी के उदय से।

तो मुनिराज नही मिले । वे विहार कर गये थे । लौटते समय सेठ को वीतराग के मार्ग से विरूद्ध प्ररूपणा और आचरण करने वाले वेशधारी ढोगी मिले । उसने उन्हे वन्दना की और सोचा- मेरे लिए तो वे और ये दोनो सरीखे है ।' इस प्रकार जो सर्वज्ञ के मार्ग को भी सच्चा समझे और अन्य मार्गो को भी सच्चा समझे, वह तीसरे मिश्र गुणस्थान वाला है । वह सभी देव, सभी गुरु, सभी धर्म और सभी शास्त्र मानता है ।

अथवा—सम्यक्त्व और मिथ्यात्व मे तटस्थ वृत्ति ।

तीसरे गुणस्थान वाला भी अनादि काल से उलटा था, सो सुलटा हुआ, कृष्णपक्षी से शुक्लपक्षी हुआ, उडद के ऊपर का कालापन हट कर मौगर जैसा उजला हुआ । समकित के समुख हुआ, परन्तु आगे पैर बढाने मे समर्थ नही हुआ । अतएव उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पुद्‌गल परावर्तन ससार मे परिभ्रमण करना शेष रहा । जिस प्रकार, किसी मनुष्य को एक करोड रुपया ऋण देना था । उसमे से निन्यानवे लाख, निन्यानवे हजार, नौ सौ, साढे निन्यानवे, से कुछ अधिक तो दे चुका, परन्तु कुछ कम आठ आने देना रहा । इसी प्रकार थोडा ससार परिभ्रमण करना शेष रहा ।

4 चौथे गुणस्थान का लक्षण-सात प्रकृतियो का क्षयोपशम आदि करने पर जीव की जो आस्था होती है, उसे चौथा "अविरत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान' कहते हैं । वे सात प्रकृतिया ये है—1 अनन्तानुबन्धी क्रोध 2 मान 3 माया 4 लोभ 5 समकितमोहनीय 6 मिश्रमोहनीय 7 मिथ्यात्वमोहनीय । कुगुरु, कुदेव, कुधर्म कुशास्त्र की

आस्था रखना—"मिथ्यात्व मोहनीय" है। सभी देव, सभी गुरु, सभी धर्म और सभी शास्त्रो को समान समझने को 'मिश्र-मोहनीय' कहते है। जिस प्रकार कूटे हुए कोद्रव धान्य के छिलको मे मादक शक्ति पूर्ण नही होता, उसी प्रकार जिस कर्म के द्वारा सम्यक्त्व गुण का पूर्ण घात तो न हो, परन्तु उसमे चल •मल ★अगाढ □दोष उत्पन्न हो, उसे–'सम्यक्त्वमोहनीय' कहते हैं।

सात प्रकृतियो के नौ भग ८ होते है—1 चार अनन्तानुबन्धी प्रकृतियो का क्षय हो, तीन का उपशम हो, 2 पाच प्रकृतियों का क्षय हो, दो का उपशम हो। छह प्रकृतियो का क्षय और एक का उपशम हो। इन तीनो भंगो को क्षयोपसम समकित' कहते हैं। 4 चार प्रकृतियो का क्षय दो का उपशम और एक को वेदे। 5 पाच प्रकृतियो का क्षय, एक का उपशम और एक का वेदन हो। इन दोनो भगो को 'क्षयोपशम वेदक सम्यक्त्व' कहते है। 6 छह प्रकृतियो का क्षय और एक के वेदन को 'क्षायिक वेदक समकित' कहते है। 7 छह प्रकृतियो का उपशम हो और एक को वेदे, उसे उपशम-वेदक समकित' कहते हैं 8 सात प्रकृतियो का

•श्री शान्तिनाथ जी शान्ति करने मे, पार्श्वनाथजी परिचय देने मे समर्थ है, इस प्रकार अनेक विषयो मे चलायमान होने को 'चल दोष' कहते है।

★छद्मस्थपन की तरह मे सम्यक्त्व मे मलिनता आ जाने को 'मल दोष' कहते है।

□यह मेरा शिष्य है, यह उसका, इत्यादि भ्रम उत्पन्न करने वाले दोष को 'अगाढ दोष' कहते है। अगाढ अर्थात् कुछ शिथिल।

८ इन नव भग मे चौथा गुणस्थान प्राप्त हो जाता है। कोई जीव पहले भग मे, कोई दूसरे मे और तीसरे आदि मे और चौथे गुणस्थान मे जाता है।

उपशम हो, उसे 'उपमश समकित' कहते हैं । 9 सातो प्रकृतियो का क्षय हो, उसे 'क्षायिक समकित' कहने हैं ।

चौथे गुणस्थान मे आया हुआ जीव, जीवादिक नौ पदार्थों का जानकर होता है । द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव का जानकार होवे, नवकारसी आदि वर्षी तप को उपादेय जाने, श्रद्धा करे, प्ररूपणा करे, परन्तु पालन नही कर सकता, क्योकि अविरत सम्यग्दृष्टि+है ।

फल-यदि सम्यक्त्व प्राप्ति के पूर्व आयु का बन्ध नही हुआ हो, तो इस गुणस्थान मे सात बोलो का बन्ध नही हो सकता-1 नारकी 2 तिर्यंच 3 भवनपति 4 वाणव्यन्तर 5 ज्योतिषी 6 स्त्रीवेद और 7 नपु सकवेद । यदि पहले बन्ध हो गया हो, तो भोगना ही पडता है । जैसे श्रेणिक महाराजा को भोगना पडा ।

5 देशविरति गुणस्थान का लक्षण-पहले कही हुई सात प्रकृतिया और अप्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ-ये-चार, इस प्रकार ग्यारह प्रकृतियो का क्षयोपशमादि करने से जो गुणस्थान होता है, वह पाचवा गुणस्थान है । इस गुणस्थान मे आया हुआ जीव, जीवादिक नौ पदार्थो का जानकार होता है । नवकारसी आदि से लेकर वर्षी तप आदि जानता है श्रद्धान करता है, प्ररूपता हैं और शक्ति अनुसार प्रत्याख्यान करता है । एक प्रत्याख्यान से लेकर श्रावक के बारह व्रत, ग्यारह प्रतिमाए तक पालन करे यावत् सलेखना तक अनशन करे ।

फल—इस गुणस्थान का आराधक जीव, जघन्य तीसरे भव उत्कृष्ट सात-आठ अर्थात् पन्द्रह भवो मे मोक्ष जावे । सात भव वैमानिक देवो के और आठ मनुष्य के करता है ।

+अप्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय से एक देश सयम भी पालन नही कर सकता ।

6 प्रमत्तसयत गुणस्थान का लक्षण पूर्व कही हुई ग्यारह प्रकृतियां और 4 प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। इस प्रकार पन्द्रह प्रकृतियो के क्षयादि से जो गुणस्थान हो, उसे छठा 'प्रमत्त-सयत गुणस्थान' कहते हैं। इस गुणस्थान वाला नौ तत्व और द्रव्य क्षेत्र काल भाव का जानकार होता है, नवकारसी आदि दर्पी तप जाने श्रद्धे प्ररूपे और पालन करे ×।

फल—छठे गुणस्थान का आराधक जीव ज उसी भव मे और उ सात-आठ भवों मे मोक्ष जाता है।

7 अप्रमत्त सयत का लक्षण-पाच प्रमादो के छोड़ने से जो गुणस्थान हो, वह 'अप्रमत्त* गुणस्थान' है। पाच प्रमाद-1 मद 2 विषय 3 कषाय 4 निद्रा और 5 विकथा। इस गुणस्थान वाला जीवादिक नौ पदार्थो का तथा द्रव्य क्षेत्र काल भाव का जानकर होवे, नवकारसी आदि तप जाने, श्रद्धा करे, प्ररूपणा करे और फरसे।

फल—इस गुण स्थान का आराधक ज. उसी भव मे मध्यम तीसरे भव में और उ० सात-आठ भवो में मोक्ष जाता है।

8 निवृत्तिबादर गु का लक्षण-अपूर्वकरण शुक्ल ध्यान आने पर जो गुणस्थान हो, उसे आठवा "अपूर्वकरण" (जो परिणाम पहले कभी न हुए हो) गुणस्थान कहते हैं। यहां से—उपशम श्रेणी और क्षपकश्रेणी प्रारम्भ होती है। उपशम श्रेणी

× इस गुणस्थान मे आते ही 'साधु' सज्ञा होती हैं। सत्तरह प्रकार का सयम पालन होता है। इसे 'सर्वविरति गुणस्थान' भी कहते हैं।

* सातवें गुणस्थान की जघन्य और उत्कृष्ठ स्थिति अन्तर्मुहूर्त की है। इसमे केवल संज्वलन कषाय और नो-कषाय का मन्द उदय रह जाता है। ध्यान की मुख्यता है।

पडिवाई☐ है और क्षपकश्रेणी अप्रतिपाती है। उपशम श्रेणी का लक्षण पहले कही हुई 15 और छ. हास्यादिक (1 हास्य 2) रति 3 अरति 4 भय 5 शोक 6 जुगुप्सा) इन इक्कीस प्रकृतियो का उपशम करे, तो आठवे गु से नौवे गुणस्थान तक जाता है और पूर्वोक्त इक्कीस तथा 1 स्त्रीवेद 2 पुरुषवेद 3 नपु सकवेद 4 सज्वलन क्रोध 5 मान और 6 माया–ये छह मिलाकर सत्ताईस प्रकृतियो का उपशम करे, तो दसवे गुणस्थान मे आता है। पूर्व कही हुई सत्ताईस और एक सज्वलन लोभ–इन अट्ठाईस प्रकृतियो का उपशम करने से जीव को ग्यारहवा गुणस्थान प्राप्त होता है। ग्यारहवे गुणस्थान की स्थिति पूरी होने पर उपशम हुए सज्वलन लोभ का उदय होने पर नीचे गिर जाता है। जैसे अग्नि के ऊपर राख आ जाती है, परन्तु राख के हट जाने से लपटे उठने लगती है। या जैसे कोठरी मे कोठरी और कोठरी मे भी फिर कोठरी होने से आगे का रास्ता वन्द हो जाता है, वहा से उसे लौटना ही पडता है। इसी प्रकार ग्यारहवे गु० से लौटना ही पड़ता है। लौटकर दसवे गु० मे आता है, नौवें गु० मे आता है यावत् कोई पहले गुणस्थान मे भी आता है।

क्षपक श्रेणी का लक्षण–जीव इक्कीस प्रकृतियो का क्षय करके नौवे गुणस्थान मे आता है, सत्ताईस प्रकृतियो का क्षय करके दसवें गुणस्थान मे आता है, अट्ठाईस प्रकृति का क्षय करके और ग्यारहवे गुणस्थान को छोडकर, सीधा वारहवे

☐पडिवाई–प्रतिपाति (गिरनेवाला)। क्योकि उपशमश्रेणी वाला ग्यारहवें गुणस्थान मे उस समय ऊपर नही पहुच कर गिर जाता है या काल कर जाता हैं, और क्षपकश्रेणी वाला दसवें गुणस्थान से सीधा बारहवें गुणस्थान मे पहुच जाता हैं, ग्यारहवे मे नही जाता। वारहवें गुणस्थान मे फिर नीचे नही उत्तरना। वह निश्चय ही मोक्ष लाभ करता है।

गुणस्थान मे आता है । बाहरवे गु. के अन्तिम समय मे शेष ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अतराय-इन तीन कर्मों का क्षय करके जीव तेहरवे गुणस्थान में आता है । तेहरवे गुणस्थान मे दस बोलो की प्राप्ति × होती है-1 अनन्त दान-लब्धि 2 अनन्त लाभ-लब्धि 3 अनन्त भोग-लब्धि 4 अन्नत उपभोग-लब्धि 5 अनन्त वीर्य-लब्धि 6 केवलज्ञान 7 केवलदर्शन 8 क्षायिक-समकित + 9शुक्लध्यान और 10 यथाख्यात-चारित्र ।

तेरहवे गुणस्थान मे मन, वचन और काया के योग का निरोध (रोक) करके चौदहवे गुणस्थान मे आता है । चौदहवे गुणस्थान मे पांच लघु अक्षर □ के उच्चारण जितनी स्थिति मे रहकर–1 वेदनीय 2 आयुष्य 3 नाम और 4 गोत्र-ये चार अघातिय कर्म का क्षय करके अफुसमाण (स्पर्श न करते हुए) गति से, एक समय की अविग्रह★गति से औदारिक तैजस् और कार्मण शरीर को छोडकर सिद्ध गति को प्राप्त होता है । सिद्ध गति मे जन्म नही मरण नही, जरा नही, रोग नही, शोक नही, दु ख नही, दारिद्रय नही, मोह नही, माया नही, कर्म नही, काया नही, चाकर नही, ठाकर नही, गुरु नही, चेला नही, भूख नही, प्यास नही ज्योति

× ये दस बोल, घन-घातिया कर्मों के क्षय होने से ही प्राप्त होते है । आदि की पाच लब्धिया अन्तराय कर्म के क्षय से, केवलज्ञान, ज्ञानावरण के क्षय से, केवलदर्शन दर्शनावरण के क्षय से और शेष मोहनीय के क्षय से प्राप्त होते हैं ।

+ 8 से 10 तक के 3 गुण पहले मे ही प्राप्त हो जाते हैं ।

□ अ, इ, उ, ऋ, लृ ।

★ बिना मोड वाली गति से ।

▭ मे ज्योति विराजमान है। अन्नत सुखो मे लीन, अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त क्षायिक-सम्यक्त्व, निरावाध अटल अवगाहना, अमूर्त्ति, अगुरु-लघु, अनन्त वीर्य सहित विराजमान होते है।

3 स्थिति द्वार +

पहले गुणस्थान के तीन भग हैं–1 अनादि-अपर्यवसित × जिसकी आदि भी नही और अन्त भी नही, 2 अनादि सपर्य-वसित □ जिसकी आदि नही, किन्तु अन्त है, 3 सादिस पर्यवसित 卐 जिसकी आदि भी है और अन्त भी है, तीसरे भग की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट देशोन अर्धपुद्गल परावर्तन की है।

दूसरे गुणस्थान की स्थिति ज० एक समय, उ० छह आव-लिका की है।

तीसरे और बारहवे गुणस्थान की स्थिति ज उ अन्तर्मुहूर्त की है।

चौथे गुणस्थान की स्थिति ज. अन्तर्मुहूर्त और उ छासठ सागर झाझेरी है।

▭ अनावरण गुण के कारण परस्पर एक दूसरे सिद्ध की स्थिति का विरोध नही करते–"एक मांहि अनेक राजे, अनेक मांहि एकीक। एक अनेक की नाहि सख्या, नमो सिद्ध निरजन।"

+ आत्मा के साथ कर्मो के लगे रहने का काल 'स्थिति' कहलाता है।

× यह भग अभव्य जीव की अपेक्षा मे है, क्योकि वे अनादिकाल से मिथ्यात्वी है और अनन्तकाल मिथ्यात्वी ही रहते है।

□ यह अनादि मिथ्यादृष्टि भव्य जीव की अपेक्षा से है।

卐 यह तीसरा भग प्रतिपाति सम्यक्त्वी की अपेक्षा से है, जो सम्यक्त्व को प्राप्त करके फिर मिथ्यात्व मे आया हो।

पाचवे और तेरहवे गुणस्थान की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त और उ देशोन क्रोड पूर्व की है।

छठे गुणस्थान की जघन्य स्थिति एक समय की उ देशोन क्रोड पूर्व है।

सातवे, आठवे, नौवें, दसवे और ग्यारहवे गुणस्थान की स्थिति ज एक समय उ. अन्तर्मुहूर्त की है।

चौदहवे गुणस्थान की स्थिति मध्य रीति से पाच लघु अक्षर के उच्चारण करने मे जितना काल लगे उतनी है।

4 क्रिया द्वार

पच्चीस क्रियाओ के नाम—1 काइया 2 अहिगरणिया 3 पाउसिया 4 पारियावणिया 5 पाणाइवाइया 6 आरम्भिया 7 परिग्गहिया 8 मायावत्तिया 9 मिच्छादसणवत्तिया 10 अप-च्चक्खाण 11 दिट्ठिया 12 पुट्ठिया 13 पाडुच्चिया 14 सामतो वणिवाइया 15 नेसत्थिया 16 साहत्थिया 17 आणवणिया 18 वेदारणिया 19 अणाभोगवत्तिया 20 अणवकखवत्तिया 21 पओइया 22 सामुदाणिया 23 पेज्जवत्तिया 24 दोसवत्तिया और 25 ईरियावहिया।

पहले और तीसरे गुणस्थान मे ईरियावहिया के सिवाय चौवीस× क्रियाएँ पाई जाती है। दूसरे* और चौथे मे मिथ्यात्व

×तीसरे गु० मिश्र परिणाम होते है। अत इनमे जो मिथ्यात्व का अश है, उनकी अपेक्षा से मिथ्यात्व क्रिया बतलाई है। कारण द्वार मे भी इसी प्रकार समझना चाहिए।

*दूसरे गु० का जीव यद्यपि मिथ्यात्व के उन्मुख है, तथापि वह अभी मिथ्यात्व मे नही आया है, अत उसमे मिथ्यात्व क्रिया का अभाव बतलाया गया है।

को भी छोडकर तेईस क्रियाए पाई जाती हैं। पाचवे मे अविरति को छोडकर बाईस क्रियाए है। छठे मे आरम्भिया और मायावत्तिया ये दो क्रियाएं हैं। सातवे, आठवे, नौंवे और दसवे गु. मे एक मायावत्तिया क्रिया पाई जाती है। ग्यारहवे बारहवें और तेरहवें मे एक ईरियावहिया क्रिया पाई जाती है। चौदहवे गुणस्थान मे एक भी क्रिया नही है।

5 सत्ता द्वार □

पहले गुणस्थान से ग्यारहवे गु० तक आठो ही कर्मो की सत्ता है। बारहवे गुणस्थान मे सात×कर्मों की सत्ता है और तेरहवे तथा चौदहवें गु० मे चार अघातिया कर्मो की सत्ता रहती है।

6 बन्ध द्वार +

तीसरे गुणस्थान को छोडकर पहले से सातवें गु तक सात तथा आठ कर्मों का बन्ध होता है (जब सात कर्मों का बन्ध होता है तब आयु-कर्म नही बधता।) तीसरे आठवे और नौवें गुणस्थान मे आयु-कर्म के सिवाय सात कर्मों का बन्ध होता है। दसवे गुणस्थान मे मोहनीय और आयु के सिवाय छह कर्मो का बन्ध होता हैं। ग्यारहवे, बारहवें और तेरहवें गुणस्थान मे एक सातावेदनीय का ही बन्ध होता है। चौदहवे गुणस्थान मे बन्ध नहीं होता।

□ आत्मा के साथ कर्मों का लगा रहना सत्ता है।

× क्योंकि बारहवें गु० मे मोहनीय-कर्म का अभाव हो जाता है।

+ आत्मा के साथ कर्मो का क्षीर-नीर के समान एकमेक हो जाना।

7 उदय द्वार ▭

पहले गुणस्थान से दसवे गुणस्थान तक आठो कर्मों का उदय होता है। ग्यारहवे तथा बारहवे गुणस्थान मे मोहनीय कर्म के सिवाय सात कर्मों का उदय होता है। तेरहवे तथा चौदहवे गु० मे चार अघातिया कर्मों का उदय होता है।

8 उदीरणा द्वार □

तीसरे गुणस्थान के सिवाय पहले से लेकर छठे गुणस्थान तक सात-आठ कर्मों की उदीरणा होती है, (सात की उदीरणा हो तो आयु कर्म की नही होती) तीसरे गुणस्थान मे आठो कर्मों की उदीरणा होती है, सातवे, आठवे और नौवे गुणस्थान मे छह कमो की उदीरणा (आयु और वेदनीय छोडकर) दसवे गुणस्थान मे छह या पाच कर्मों की उदीरणा (छह की हो तो पूर्वोक्त दो छोडना और पाच की हो तो मोहनीय भी छोड देना) ग्यारवे गु० मे पांच कर्मो की उदीरणा, बारहवे गुण मे पूर्वोक्त पाच कर्मो की या नाम और गोत्र इन दो कर्मों की उदीरणा होता है। तेरहवे गु मे पूर्वोक्त दो की उदीरणा होती है या किसी की नही होती। चौदहवे गुणस्थान मे उदीरणा नही होती।

▭ स्थिति पूर्ण करके कर्म का फल देना 'उदय' कहलाता है।

□ तपस्या लोच आदि क्रियाओ से स्थिति पूर्ण होने से पूर्व ही कर्म का फल देना 'उदीरणा' है।

9 निर्जरा द्वार+

पहले गुणस्थान से दसवे गु० तक आठो कर्मों की निर्जरा होती है। ग्यारहवे तथा बारहवे गु० मे मोहनीय कर्म के सिवाय सात कर्मों की निर्जरा होती है और तेरहवे तथा चौदहवे गु० मे चार अघातिया कर्मों की निर्जरा होती है।

10 भाव द्वार

भाव पाच होते है—1 औदयिक □ भाव 2 औपशमिक ▭ भाव 3 क्षायिक ✶ भाव 4 क्षायोपशमिक × भाव और 5 पारिणामिक ÷ भाव।

पहले, दूसरे और तीसरे गु० मे-औदयिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक-ये तीन भाव होते हैं। चौथे से ग्यारहवे गु० तक उपशम-श्रेणी वाले मे पाचो भाव होते है। चौथे से बारहवे गु० तक क्षपक-श्रेणी वाले मे औपशमिक छोडकर शेष चारो भाव पाये जाते हैं। तेरहवे और चौदहवे गु० मे औदयिक, क्षायिक और पारिणामिक भाव-ये तीन भाव होते हैं, तथा सिद्धो मे क्षायिक और पारिणामिक—ये दो भाव होते है।

+फल देकर कर्मों का आत्मा से पृथक् हो जाना 'निर्जरा' है।

□कर्मों के उदय से होने वाला भाव, जैसे—क्रोध आदि।

▭कर्मों के उपशम से होने वाला भाव, जैसे—उपशम समकित, चारित्र।

✶कर्मों के क्षय से होने वाला भाव, जैसे—केवलज्ञान।

×कर्मों के क्षयोपशम से होने वाला भाव, जैसे—मतिज्ञान आदि।

÷स्वभाव से ही रहने वाला भाव, जैसे जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व।

11 कारण द्वार

बन्ध के कारण पाच होते है— 1 मिथ्यात्व 2 अविरति 3 प्रमाद 4 कषाय और 5 योग।

पहले और तीसरे गुणस्थान मे पाचो ही कारण होते हैं। दूसरे और चौथे गु० मे मिथ्यात्व के सिवाय चार कारण होते हैं। पाचवें और छठे गु से मिथ्यात्व तथा अविरति के सिवाय तीन कारण होते है। सातवे से दसवे गु तक कषाय और योग ये दो कारण होते है और बारहवे तथा तेरहवें गु मे मात्र योग ही कारण होता है चौदहवे गु मे कोई कारण नही है, वहा कर्म का वन्ध ही नही होता।

12 परिषह द्वार

वाईस परीषहो के नाम—1 क्षुधा 2 तृषा 3 शीत 4 उष्ण 5 दशमसक 6 अचेल 7 अरति 8 स्त्री 9 चर्या 10 निषद्या (वैठना) 11 शय्या 12 आक्रोश 13 वध 14 याचना 15 अलाभ 16 रोग 17 तृणस्पर्श 18 जल (मेल) 19 सत्कार-पुरस्कार 20 प्रज्ञा 21 अज्ञान और 22 दर्शन परीपह।

चार कर्मों के उदय से वाईस परीषह होते हैं–ज्ञानावरणीय कर्म के उदय से वीसवा और इक्कीसवा–ये दो परीपह होते हैं। वेदनीय कर्म के उदय से ग्यारह (पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा, पाचवा, नौवां, ग्यारहवां, तेरहवां, सोलहवा, सत्तरहवां, और अठारहवा) मोहनीय कर्म के उदय से आठ परीपह (दर्शनमोहनीय के उदय से एक बाईसवा 'दर्शन परीपह' होता है और चारित्र-मोहनीय के उदय से सात (छठा, सातवा, आठवा, दसवा, वारहवा, चौदहवा और उन्नीसवां) परीपह होते है। अन्तराय कर्म के उदय से एक पन्द्रहवा परीपह होता है।

पहले गुणस्थान से नौवें गु० तक वाईसो परीपह होते हैं, जिनमे से एक समय मे एक जीव, अधिक से अधिक वीस परीपह

वेदता है, दो नही वेदता, क्योकि शीत-परीषह हो, तो उष्ण नही होता और उष्ण हो, तो शीत नही होता, तथा चर्या परीषह हो, तो निषद्या नही होता और निषद्या हो, तो चर्या नही होता। दसवे, ग्यारहवे और बारहवे गु मे मोहनीय कर्म के आठ परीषह छोडकर शेष चौदह परीषह होते है। उनमे से पूर्वोक्त चार में से दो ही होते है। इसलिए एक साथ अधिक से अधिक बारह परीषह होते है। तेरहवे और चौदहवे गु मे वेदनीय कर्म से होने वाले ग्यारह परीषह उत्पन्न होते है, जिनमे से एक साथ अधिक से अधिक नौ परीषह वेदते है, पूर्वोक्त रीति से दो नही होते □।

13 आत्मा द्वार

आठ आत्माओ के नाम—1 द्रव्य आत्मा 2 कषाय आत्मा 3 योग आत्मा 4 उपयोग आत्मा 5 ज्ञान आत्मा 6 दर्शन आत्मा 7 चारित्र आत्मा और 8 वीर्य आत्मा।

पहले और तीसरे गु मे ज्ञान और चारित्र आत्मा के सिवाय छह आत्माए पाई जाती है। दूसरे, चौथे और पाचवे गु मे चारित्र आत्मा के सिवाय सात आत्माए होती हैं। छठे गु से लेकर दसवे गु तक आठो आत्माए होती हैं। ग्यारहवे से तेरहवे गु तक कषाय आत्मा के सिवाय सात आत्माए होती है चौदहवे गु मे कषाय आत्मा और योग आत्मा के सिवाय छ आत्माए होती है सिद्ध भगवान् मे द्रव्य आत्मा, उपयोग आत्मा, ज्ञान आत्मा एवं दर्शन आत्मा ये 4 आत्माए होती है।

□किन्ही आचार्यों के मत से नौवे गुणस्थान तक बावीस परीषह माने जाते हैं, किन्तु कर्म-प्रकृतियो का उदय देखते हुए सातवें गु० तक बाईस परीषह होते हैं। आठवें गु० मे दर्शन परीषह को छोड कर इक्कीस परीषह होते हैं। नौवें गु० मे अचेल परीषह, अरति परीषह और निषद्या परीषह को छोड कर शेष 18 परीषह होते है।

14 जीव भेद द्वार

पहले गुणस्थान मे जीव के चौदह भेद पाये जाते है। दूसरे गु० मे जीव के छ भेद पाये जाते है—दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, असज्ञी तिर्यच पचेन्द्रिय, इनका अपर्याप्त, सँज्ञी पचेन्द्रिय का पर्याप्त और अपर्याप्त। तीसरे गु० मे जीव का एक ही भेद पाया जाता है—सज्ञी का पर्याप्त। चौथे गु० मे सज्ञी का पर्याप्त और अपर्याप्त—ये दो भेद पाये जाते है। पाचवे से लेकर चौदहवे गु० तक जीव का एक ही भेद—सज्ञी पचेन्द्रिय का पर्याप्त पाया जाता है।

15 गुणस्थान द्वार

प्रत्येक गुणस्थान अपने-अपने गुण से सयुक्त होता है। पहले गु० से चौथे गु० तक आठ बोल पाये जाते है–1 असयत 2 अप्रत्याख्यानी 3 अविरत 4 असवृत 5 अपण्डित 6 अजाग्रत 7 अधर्मी 8 अधर्मव्यवसायी। पाचवे गु० मे आठ बोल पाये जाते हैं—1 सयतासयत 2 प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी 3 व्रताव्रती 4 सवृतासवृत 5 बालपण्डित 6 सुप्त-जाग्रत 7 धर्माधर्मी 8 धर्माधर्मव्यवसायी। छठे गुणस्थान से चौदहवे गु० तक आठ बोल पाये जाते है—1 सयती 2 प्रत्याख्यानी 3 विरत 4 सवृत 5 पण्डित 6 जागृत 7 धर्मी 8 धर्मव्यवसायी।

दूसरी तरह से गुणस्थान द्वार—

गत्यन्तर जाते मार्ग मे गुणस्थान तीन—पहला, दूसरा और चौथा।

अमर गु० तीन—3, 12, 13।

अप्रतिपाति गु० तीन 12, 13, 14।

तीर्थंकर नामकर्म के बन्धक गु० पाच—4, 5, 6, 7, 8
तीर्थंकर के लिए अस्पृश्य गु० पाच—1, 2, 3, 5, 11
शाश्वत गु० पाच–1, 4, 5, 6, 13
अनाहारक × गु० पाच—1, 2, 4, 13, 14

मोक्ष प्राप्त करने वाला उस भव मे कम से कम आठ गु० अवश्य प्राप्त करता है-4, 7, 8, 9, 10, 12, 13, 14 और ससार अवस्थान काल मे कम से कम प्रथम गु० सहित नौ गु० प्राप्त करता है।

16 योग द्वार □

पहले दूसरे और चौथे गुणस्थान मे 13 योग–1 आहारक और 2 आहारक मिश्र, इन दो को छोडकर पाये जाते हैं। तीसरे गु० मे 10 योग (1 औदारिक-मिश्र 2 वैक्रिय-मिश्र 3 आहारक 4 आहारक मिश्र और 5 कार्मण, इन पाचो को छोडकर) पाये जाते हैं। पाचवे गु० मे 12 योग (1 आहारक 2 आहारक मिश्र और 3 कार्मण को छोडकर) पाये जाते हैं। छठे गु० कार्मण के सिवाय चौदह योग पाये जाते हैं। सातवे गु० मे तीन मिश्र (औदारिक-मिश्र, वैक्रिय-मिश्र, आहारक-मिश्र) और एक कार्मण,

× औदारिक आदि के पुद्गलो को ग्रहण नही करने वाले को 'अनाहारक' कहते हैं। पहला दूसरा और चौथा गु० विग्रह गति की अपेक्षा से अनाहारक हैं और तेरहवा केवली-समुद्रघात के तीसरे चौथे और पाचवे समयो की अपेक्षा अनाहारक है। चौदहवें गु० मे तो आहार पुद्गलो का ग्रहण होता ही नही, अत वह अनाहारक है।

□ मन वचन और काया के निमित्त से, आत्मा के प्रदेशो मे होने वाली चचलता को 'योग' कहते हैं। इसके पन्द्रह भेद है।

इन चारो को छोडकर ग्यारह योग पाये जाते है। आठवें से बारहवें गु तक चार मनोयोग, चार वचन योग और एक औदारिक इस प्रकार नो योग पाये जाते हैं। तेरहवे गु मे पाच या सात योग होते है—पाच होवे तो 1 सत्य मनोयोग 2 व्यवहार मनोयोग 3 सत्य वचन योग 4 व्यवहार वचन तथा 5 औदारिक-ये पाच होते हैं। यदि सात हो, तो पाच पूर्वोक्त और औदारिक मिश्र तथा कार्मण, इस प्रकार सात होते है। चौदहवे गुणस्थान मे योग नही होता।

17 उपयोग द्वार

पहले और तीसरे गुणस्थान मे छह उपयोग हो सकते है—तीन अज्ञान–मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभग ज्ञान और तीन दर्शन–चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन। दूसरे, चौथे और पाचवे गु० मे छह उपयोग होते है–3 ज्ञान, 3 दर्शन। छठे से बारहवे गु. तक सात उपयोग होते है–पूर्वोक्त छह और एक मन पर्याय ज्ञान। तेरहवे और चौदहवे गु मे केवलज्ञान और केवल-दर्शन–ये दो ही उपयोग होते है।

18 लेश्या द्वार

पहले गुणस्थान से छठे गु० तक छ लेश्याए पाई जाती हैं। सातवे गु मे तेज, पद्म और शुक्ल–ये तीन लेश्याए होती हैं। आठवे से बारहवे तक एक शुक्ल लेश्या ही होती है। तेरहवे गु मे एक परम शुक्ल लेश्या होती है। चौदहवे गु मे लेश्या नही होती।

19 हेतु द्वार

हेतु सत्तावन होते है–5 मिथ्यात्व, 25 कषाय, 15 योग और 12 अव्रत (6 काय × 5 इन्द्रिय 1 मन)।

× छह काय की यतना न करना और पाच इन्द्रिय तथा मन को वश मे न रखना।

पहले गुणस्थान मे आहारक और आहारक मिश्र को छोड़कर शेष पचपन हेतु पाये जाते हैं। दूसरे गुणस्थान मे पाच मिथ्यात्व को छोडकर पचास हेतु पाये जाने हैं। दूसरे गु मे पूर्वोक्त पचास मे से चार अनन्तानुबन्धी, औदारिक-मिश्र, वैक्रिय मिश्र और कार्मण-इन सातो के सिवाय 43 हेतु पाये जाते हैं। चौथे गु मे पूर्वोक्त 43 के सिवाय औदारिक मिश्र, वैक्रिय-मिश्र और कार्मण-ये तीन विशेष होकर 46 हेतु पाये जाते हैं। पाचवे गु मे छियालीस मे से अप्रत्याख्यान की चौकडी, त्रस की अविरति और कार्मण-ये छह घटा कर चालीस हेतु पाये जाते है। छठे गु. मे सत्ताईस हेतु पाये जाते हैं-14 योग और 13 कषाय □। सातवें गु मे, औदारिक-मिश्र वैक्रिय-मिश्र और आहारक-मिश्र इन तीन को छोडकर चौबीस हेतु पाये जाते हैं। आठव गु मे वैक्रिय और आहारक को छोडकर वाईस हेतु पाते जाते हैं। दसवे गु हास्य आदि छह के सिवाय सोलह हेतु पाये जाते है। दसवे गु मे नौ योग और सज्वलन का लोभ, ये दस हेतु पाये जाते हैं। ग्यारहवे तथा बारहवे गु मे, चार मन के, चार वचन के और एक औदारिक—ये नौ हेतु पाये जाते हैं। तेरहवे गु मे पाच तथा सात हेतु पाये जाते है-1 सत्य मन योग, 2 व्यवहार मन योग, 3 सत्य भापा, 4 व्यवहार भापा, 5 औदारिक, 6 औदारिक मिश्र और 7 कार्मण। चौदहवें गु मे कोई भी हेतु नही होता।

20 मार्गणा द्वार+

पहले गुणस्थान की चार मार्गणाए-तीसरा, चौथा, पाचवां

□ सज्वलन की चौकडी और नौ नो-कषाय।

+ यहा मार्गणा का तात्पर्य जाने के मार्ग से है। जैसे-पहले गु० वाला ऊपर लिखे चार गु० मे जा सकता है।

और सातवा गु.। दूसरे गु. की एक मार्गणा-पहला गु । तीसरे गु की चार मार्गणा-ऊपर★चढे तो चौथे, पाचवे और सातवें मे जाता है और गिरे □ तो पहले मे जाता है। चौथे गु की पाच मर्गणा-नीचे गिरे तो पहले, दूसरे तीसरे गु मे आवे और ऊपर चढे, तो पाचवे या सातवे गु मे जावे। पाचवे गु की पाच मार्गणा गिरे तो पहले, दूसरे, तीसरे व चौथे मे आवे और चढे तो सातवे मे जावे। छठे गु० की छह मार्गणाए गिरे तो पहल के पाच गु०मे आवे, चढे तो सातवे मे जावे। सातवे की तीन मार्गणाए-गिरे तो छठे मे जावे चढे तो आठवे मे जावे,काल करे तो चौथे मे जावे। आठवे गु की तीन मार्गणाए-गिरे तो सातवे मे, चढे तो नौवे मे और काल करे तो चौथे मे जावे, नौवे गु की तीन मार्गणाए-गिरे तो आठवे मे, चढे तो दसवे मे और यदि काल करे तो चौथे मे जावे। दसवे गु की चार मार्गणाए -गिरे तो नौवे मे, चढे तो ग्यारहवें मे, या बारहवे मे जावे और काल करे तो चौथे मे जावे। ग्यारहवे गु. की दो मार्गणाए-गिरे तो दसवे मे और काल करे तो चौथे मे जावे। बारहवे गु की एक मार्गणा-तेरहवे मे जावे। तेरहवे गु. की एक मार्गणा-चौदहवे मे जावे। चौदहवे गु वाले मोक्ष मे ही जाते हैं।

21 ध्यान द्वार❀

-पहले, दूसरे और तीसरे गुणस्थान मे आर्त्त ध्यान तथा रौद्र ध्यान पाये जाते हैं। चौथे और पाचवे मे आर्त्त ध्यान, रौद्रध्यान और धर्मध्यान पाये जाते हैं। छठे मे आर्त्तध्यान और धर्मध्यान होता है। सातवे मे केवल धर्मध्यान ही है। आठवे से तेरहवे तक

★ परिणामो की विशुद्धि के कारण आगे के गु मे जावे तो।

□ परिणामो की अविशुद्धि के कारण नीचे के गु मे आवे तो।

❀ चित्त की एकाग्रता को 'ध्यान' कहते हैं।

शुक्ल ध्यान पाया जाता है और चौदहवे गुणस्थान मे परमशुक्ल ध्यान होता है।

22 दण्डक द्वार

पहले गुणस्थान मे चौबीस दण्डक, दूसरे मे चौबीस मे से पाच स्थावर के छोडकर उन्नीस, तीसरे और चौथ मे (उन्नीस मे से तीन विकलेन्द्रिय के छोडकर) सोलह, पाचवे मे सज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय और मनुष्य-ये दो, छठे से चौदहवे गु तक मनुष्य का एक दण्डक पाया जाता है।

23 जीवयोनि द्वार

पहले गुणस्थान मे चौरासी लाख ▭ जीवयोनि। दूसरे गु मे (एकेन्द्रिय की 52 लाख छोडकर) बत्तीस लाख। तीसरे चौथे गु मे (तीन विकलेन्द्रिय की छह लाख घटाकर) छब्बीस लाख पाचवे गु मे (चौदह लाख मनुष्यो की और चार लाख तिर्यंचो की-इस प्रकार) अठारह लाख, छठे गु से चौदहवे गु तक मनुष्य की चौदह लाख जीवयोनिया पायी जाती है।

24 निमित्त द्वार

पहले से चौथे तक चार गुणस्थान, दर्शनमोहनीय के निमित्त से होते है। पाचवे से बारहवे तक आठ गु चारित्र-मोहनीय के

▭ चौरासी लाख जीवयोनि इस प्रकार है — 7 लाख पृथ्वीकाय, 7 लाख अपकाय, 7 लाख तेउकाय, 7 लाख वायुकाय, 10 लाख प्रत्येक-वनस्पतिकाय, 14 लाख साधारण वनस्पतिकाय, 2 लाख बेन्द्रिय 2 लाख त्रेन्द्रिय, 2 लाख चतुरिन्द्रिय, 14 लाख मनुष्य, 4 लाख तिर्यंच पचेन्द्रिय 4 लाख नारकी और 4 लाख देवो की।

निमित्त से होते है और तेरहवा तथा चौदहवा गु योग के निमित्त से होता है।

25 चारित्र द्वार

पहले से चौथे गुणस्थान तक चारित्र नही होता, पाचवे गु मे देश चारित्र छठे और सातवे गु॰ मे तीन चारित्र होते हैं— 1 सामायिक✲ 2 छेदोपस्थानीय ⊃ और 3 परिहार विशुद्धि• । आठवे नौवे गु मे दो चारित्र होते है–1 सामायिक 2 छेदोपस्थापनीय। दसवे गु मे 1 सूक्ष्मसम्पराय☐ चारित्र होता है। ग्यारहवे से चौदहवे गु तक यथाख्यात۞ चारित्र होता है।

26 समकित द्वार

क्षायिक सम्यक्त्व चौथे गुणस्थान से चौदहवे गु तक होता है। उपशम सम्यक्त्व चौथे गु॰ से ग्यारहवे गु॰ तक होता है।

✲ जिस चारित्र मे समता भाव की प्राप्ति हो, उसे 'सामायिक चारित्र' कहते हैं।

⊃ पहले ग्रहण किये हुए सयम को छेद कर फिर सयम से आना-अर्थात् पहले जितने दिन सयम पालन किया हो, उसे न गिन कर दूसरी बार सयम लेने के समय से दीक्षाकाल गिनना और बडे छोटे का व्यवहार करना, इसे 'छेदोपस्थापनीय चारित्र' कहते हैं।

• जिसमे परिहार–विशुद्धि नाम की तपस्या की जाती है, उसे परिहार–विशुद्धि चारित्र कहते हैं।

☐ जिस चारित्र मे कषाय का सूक्ष्म उदय रहता है, उसे 'सूक्ष्मसपराय चारित्र कहते हैं। इसमे सूक्ष्म लोभ का ही उदय होता है।

۞ जिस चारित्र मे लेश मात्र भी कषाय नही रहती उसे 'यथाख्यात चारित्र' कहते हैं।

क्षायोपशमिक (वेदक) सम्यक्त्व चौथे से सातवें गु. तक होता है। सास्वादन सम्यक्त्व दूसरे गु मे होता है। मिथ्यात्व और मिश्र गु मे सम्यक्त्व नही है।

27 अन्तर द्वार

पहले गुणस्थान के तीन भग है–1 अनादि–अपर्यवसित (सदा से मिथ्यादृष्टि है और सदा रहेगे) 2 अनादि–सपर्यवसित (जिनके मिथ्यात्व की आदि नही, किन्तु अन्त है) 3 सादि-सपर्यवसित (जिनके मिथ्यात्व की आदि भी है और अन्त भी है)।

इन तीन भगो मे से तीसरे भग का अन्तर ज अन्तर्मुहूर्त और उ. छासठ सागर झाझेरी हैं। दूसरे से लेकर ग्यारहवे गु तक का अन्तर ज अन्तर्मुहूर्त और उ देशोन (कुछ कम) अर्द्ध पुद्गल परावर्तन है। बारहवे, तेरहवे और चौदहवें गु का अतर नही है★।

★ तात्पर्य किसी गुणस्थान से एक बार च्युत होकर दूसरी बार फिर उसी गु मे आने तक जितना काल बीच मे व्यतीत होता है, उसे 'अन्तर' कहते हैं। पहले मिथ्यात्व गु के पहले दो भगो मे अन्तर नही होता, क्योकि वे उस गु से छूटते ही नही है। दूसरे गु से लेकर ग्यारहवें गु तक के जीव अपने-अपने गु से च्युत होकर कम मे कम अन्तर्मुहूर्त मे और अधिक से अधिक कुछ कम अर्द्ध पुद्गल-परावर्तन काल मे, उन-उन गुण स्थानो मे आते हैं, इसी कारण इनमे इतने समय का अन्तर बतलाया गया है। बारहवें, तेरहवें और चौदहवें गु वाले जीव, इन गु मे च्युत होकर फिर इन गु मे नहीं आते, एक बार चढकर सिद्ध हो जाते हैं। अतएव इनका कुछ भी अन्तर नही है।

28 अल्प-बहुत्व द्वार

ग्यारहवे गुणस्थान वाले जीव सब से थोडे है और वे एक समय मे 54 पाये जाते है ग्यारहवे गु की अपेक्षा बारहवे और चौदहवे गु वाले सख्यात गुण अधिक है। क्षपक–श्रेणी वाले एक सौ आठ पाये जाते है। इनसे उपशम–श्रेणी के आठवे नौवे और दसवें गु वाले सख्यात गुण है। ये एक समय मे पृथक्त्व ⊃ सौ पाये जाते है। उनकी अपेक्षा तेरहवे गु वाले सख्यात गुण है और एक समय पृथक्त्व करोड पाये जाते है। उनकी अपेक्षा सातवें गु वाले संख्यात गुण है और एक समय मे पृथक्त्व सो करोड पाये जाते है। उनकी अपेक्षा छठे गुण वाले सख्यात गुण है और एक समय मे पृथक्त्व हजार करोड रुपये पाये जाते है। उनकी अपेक्षा पाचवे गु वाले असख्यात गुण है +। इनकी अपेक्षा दूसरे गु. वाले असख्यात गुण है□। दूसरे गु वालो की अपेक्षा तीसरे गु वाले जीव असख्यात है×। तीसरे गु वालो की अपेक्षा चौथे

⊃ पृथक्त्व का अर्थ 2 से 9 तक माना जाता है, परन्तु 'अनेक' अर्थ उपयुक्त है। कोई–कोई इसे 'प्रत्येक' भी कहते है, परन्तु प्रत्येक का अर्थ 'हर एक' होता है। इस कारण 'पृथक्त्व' ही बोलना चाहिए।

+ क्योकि असख्यात गर्भज तिर्यंच भी इस पाचवें गुणस्थान मे है।

□ दूसरे गुणस्थान वाले पाचवें गु मे असख्यात इस कारण है कि पाचवा गु केवल मनुष्य और तिर्यंचो को होता है, किन्तु दूसरा गुणस्थान तो चारो गति के जीवो को हो सकता है। इसके सिवाय दूसरा गुणस्थान विकलेन्द्रियो को भी होता है, परन्तु पाचवा नही हो सकता।

× यद्यपि दूसरा और तीसरा गुणस्थान चारो गतियो मे पाया जाता है, परन्तु दूसरे की अपेक्षा तीसरे की स्थिति असख्यात गुणी है, इस कारण तीसरे गुण वाले जीव दूसरे से असख्यात गुण है।

गु वाले असंख्यात गुण + हैं चौथे गु वालो से पहले गु. वाले जीव अनन्त गुण □ हैं।

गति आगति

जीवो की आगति और गति का वर्णन किया जाता है।

आगति—जीव जिस गति से आकर उत्पन्न होता है।

गति—मरने के बाद जिस गति मे जाकर उत्पन्न होता है।

अपेक्षा भेद से जीव के एक, दो, तीन, चार आदि अनेक भेद होते हैं। किसी अपेक्षा से 563 भेद भी है। वे इस प्रकार है—नारकियो के 14, तिर्यंच के 48, मनुष्यो के 303 और देवो के 198।

नारकियों के 14 भेद

1 घम्मा 2 वशा 3 सीला 4 अंजना 5 रिष्टा 6 मघा 7 माघवई। इन सात नारको के नारकी पर्याप्त भी होते हैं और अपर्याप्त भी। अत 7 पर्याप्त और 7 अपर्याप्त के चोदह भेद हैं।

+ तीसरे गु की अपेक्षा चौथे की स्थिति बहुत अधिक है और वह भी चारो गति मे पाया जाता है। अत चौथे गु वाले जीव, उनकी अपेक्षा अधिक है।

□ साधारण वनस्पतिकाय के जीव, सभी मिथ्यादृष्टि है, अतएव पहले गु वाले, चौथे गु वालो मे अनन्त गुण है।

॥ गुणस्थान स्वरूप समाप्त ॥

तिर्यचों के 48 भेद

1 पृथ्वीकाय के चार भेद सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त।

2 अप्काय के चार भेद–सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त।

3 तेउकाय के चार भेद–सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त।

4 वायुकाय के चार भेद–सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त।

5 वनस्पतिकाय के छह भेद-सूक्ष्म, साधारण और प्रत्येक। इन के पर्याप्त और अपर्याप्त। यों एकेन्द्रियो के 22 भेद हुए।

तीन विकलेन्द्रिय के छह भेद-1 द्वीन्द्रिय 2 त्रीन्द्रिय ४ चतुरिन्द्रिय के पर्याप्त और अपर्याप्त।

पचेन्द्रिय के पाच भेद है–1 जलचर 2 स्थलचर 3 खेचर 4 उरपरिसर्प और 5 भुजपरिसर्प। इनके संज्ञी असज्ञी के भेद से दस भेद है और पर्याप्त तथा अपर्याप्त के भेद से बीस भेद होते हैं। इस प्रकार सब मिलकर तिर्यचो के 48 भेद है।

मनुष्यों के 303 भेद

जहा असि मसि कृपि वाणिज्य शिल्प-कला की प्रवृत्ति होती है, उसे 'कर्म भूमि' कहते है। और जहा असि मसि आदि की प्रवृत्ति नही होती और कल्पवृक्षो से ही निर्वाह हो जाता है, उसे अकर्म-भूमि कहते है। कर्म–भूमि के 15 भेद☐ है और भोग

☐ कर्मभूमि 15 इस प्रकार की है—5 भरत, 5 ऐरावत, 5 महाविदेह। एक भरत जम्बुद्वीप का, दो घातकीखण्ड के और दो पुष्करार्ध के, ये 5 भरत क्षेत्र है। इसी प्रकार ऐरावत और महाविदेह भी समझने चाहिए।

भूमि के 30 भेद× है। दोनो को मिलाकर उनमे रहने वाले मनुष्य के 45 भेद हैं। 56 अन्तरद्वीपो+ मे रहने वाले अकर्मभूमिज मनुष्यो के 56 भेद भी उनमे जोडने से 101 भेद होते हैं। पर्याप्त अपर्याप्त के भेद से इनके 202 भेद हो जाते है। इन 101 क्षेत्रो मे चौदह अशुचिस्थानो मे उत्पन्न होने वाले सम्मूर्च्छिम असज्ञी अपर्याप्त मनुष्यो के 101 भेद जोडने से 303 भेद होते हैं।

14 देवों के 198 भेद

10 भवनपति, 15 परमाधार्मिक, 16 व्यन्तर, 10 जृम्भक•

× भोगभूमि 30 पूर्वोक्त प्रकार से 5 देवकुरु, 5 उत्तरकुरु, 5 हरिवास, 5 रम्यक्वास, 5 हेरण्यवत। इस प्रकार 30 अकर्मभूमि है।

+ जम्बुद्वीप से दक्षिण की ओर चूलहेम पर्वत और उत्तर की ओर शिखरी पर्वत की चार-चार दाढाए हैं और प्रत्येक दाढा पर सात-सात क्षेत्र है। यही 8×7=56 अन्तरद्वीप कहलाते हैं। अन्तरद्वीपो के जैसे नाम हैं, वैसे ही वहा के मनुष्य होते हैं। नाम ये हैं—1 एकोरुक 2 अभाषिक 3 वैषाणिक 4 नागोलिक 5 हयकर्ण 6 गयकर्ण 7 शष्कुलिकर्ण 8 गोकर्ण 9 आदर्शमुख 10 मेण्ढमुख 11 अयोमुख 12 गोमुख 13 अश्वमुख 14 हस्तिमुख 15 सिहमुख 16 व्याघ्रमुख 17 अश्वकर्ण 18 सिहकर्ण 19 अकर्ण 20 कर्णप्रावरण 21 उल्कामुख 22 मेघमुख 23 विद्युद्दन्त 24 विद्युन्मुख 25 घनदन्त 26 लष्टदन्त 27 गूढदन्त 28 शुद्धदन्त। इसका विस्तृत वर्णन जीवाभिगम प्र 3 उ 1 मे है। दूसरी ओर के भी ये ही नाम है।

• 1 अन्नजृम्भक 2 पानजृम्भक 3 लयणजृम्भक 4 शयनजृम्भक 5 वस्त्रजृम्भक 6 पुष्पजृम्भक 7 फलजृम्भक 8 पुष्पफलजृम्भक 9 बीजजृम्भक और 10 आवतिजृम्भक। ये दस जृम्भक हैं।

10 ज्योतिषी +12 वैमानिक, 3 किल्विषी 9 नवग्रेवेयक के देव, 5 अनुत्तर विमान के देव, 9 लौकान्तिक। ये 99 प्रकार के देव पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से 198 प्रकार के होते है।

जीव के ये सभी भेद मिलाकर 563 होते हैं। इन 563 भेदों की गति–आगति का यहा वर्णन किया जाता है।

1 पहली नारकी मे आगति 25 की है। यथा–15 कर्मभूमिज मनुष्य, 5 सज्ञी तिर्यंच और 5 असज्ञी तिर्यञ्च पचेन्द्रिय के पर्याप्त। इन 25 स्थानो से आकर जीव, पहली नरक मे उत्पन्न होते हैं। गति 40 की, 15 कर्मभूमिज मनुष्य और 5 सज्ञी तिर्यंच। इन 20 के पर्याप्त और 20 अपर्याप्त।

2 दूसरी नारकी मे आगति 20 की 15 कर्मभूमिज मनुष्य और 5 सज्ञी तिर्यंच। गति 40 की पहली नारकी के समान।

3 तीसरी नारकी मे आगति 19 की। दूसरी नारकी के 20 भेदो मे से भूजपरिसर्प को छोड कर गति 40 की पहली नारकी के समान।

4 चौथी नारकी मे आगति 18 की। तीसरी नारकी के 19 भेदो मे से 'खेचर' को छोडकर। गति 40 की–पहली नारकी के समान।

5 पाचवी नारकी मे आगति 17 भेद से; चौथी नारकी के 18 भेदो मे से स्थलचर को छोडकर। गति 40 की।

+ चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारा, ये पाच ज्योतिषी अढाईद्वीप मे चर हैं और उनके बाहर स्थिर है। चर–स्थिर के भेद से इन के दस भेद होते हैं।

6 छठी नारकी मे आगति 16 भेद से, पांचवी नारकी के 17 भेदो में से उरपरिसर्प को छोड़कर। गति 40 की।

7 सातवीं नारकी मे आगति 16 भेद से, 15 कर्मभूमिज मनुष्य × और 1 मत्स्य जलचर के पर्याप्त। गति 10 भेद में 5 सज्ञी तिर्यंच पर्याप्त और 5 अपर्याप्त।

8 भवनपति वाणव्यन्तर देव मे आगति 111 भेद से 101 सज्ञी मनुष्य, 5 सज्ञी तिर्यंच और 5 असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय के पर्याप्त। गति 46 भेद मे 15 कर्मभूमिज, 5 संज्ञीतिर्यंच, 1 बादर पृथ्वीकाय, 1 बादर-अप्काय और 1 बादर वनस्पतिकाय। इन 23 के पर्याप्त और अपर्याप्त कुल 46।

9 ज्योतिषी और पहले देवलोक में आगति 50 भेद से 15 कर्मभूमिज मनुष्य, 30 अकर्मभूमिज और 5 सज्ञी तिर्यंच के पर्याप्त। गति 46 भेद मे-भवनपति के समान।

10 दूसरे देवलोक मे आगति 40 भेद से 30 अकर्मभूमिज मे से 5 हैमवत और 5 हैरण्यवत के 10 भेद छोड़कर 20, तथा 15 कर्मभूमिज मनुष्य और 5 संज्ञी तिर्यच। गति 46 भेद में भवनपति के समान।

11 पहले किल्विषी मे आगति 30 से 15 कर्म-भूमिज-मनुष्य, 5 संज्ञी तिर्यच, 5 देवकुरु और 5 उत्तरकुरु। गति, 46 मे भवन-पति के समान।

× यहा सामान्य रूप मे कर्मभूमिज मनुष्य मिलाये है, परन्तु स्त्री सातवे नरक मे नहीं जा सकती।

12 तीसरे देवलोक से आठवें देवलोक तक के छः लोकान्तिक और दूसरे व तीसरे किल्विषी, इन सत्तरह प्रकार के देवो मे 20 भेद से आगति–15 कर्मभूमिज मनुष्य और 5 संज्ञी तिर्यंच के पर्याप्त। गति 40 भेद में–15 कर्मभूमि के मनुष्य और 5 सज्ञी तिर्यंच के पर्याप्त और अपर्याप्त।

13 नौवे से बारहवें देवलोक, नौग्रैवेयक और पाच अनुत्तर विमान, इन अठारह जाति के देवो मे आगति 15 भेद से–15 कर्मभूमि के पर्याप्त मनुष्य की। गति 30 भेद में–15 कर्मभूमि के पर्याप्त और अपर्याप्त मनुष्य।

14 पृथ्वी जल और वनस्पति मे आगति 243 भेद से-101 सम्मूच्छिम अपर्याप्त मनुष्य, 30-पन्द्रह कर्मभूमि के पर्याप्त अपर्याप्त मनुष्य, 48 तिर्यंच, + 64 देव (25 भवनपति, 26 वाणव्यन्तर, 10 ज्योतिषी, पहला व दूसरा देवलोक के और पहला किल्विषी के पर्याप्त) एव 243। गति 179 भेदो मे-101 सम्मूच्छिम मनुष्य के अपर्याप्त, 15 कर्मभूमि के पर्याप्त और 15 अपर्याप्त तथा 48 तिर्यंच।

15 तेजस्काय और वायुकाय में आगति–179 भेद से, ऊपर लिखे अनुसार। गति 48 भेद के तिर्यंचो मे।

16 तीन विकलेन्द्रिय में आगति-169 भेद से और गति 179 भेद में-पूर्ववत्।

17 असज्ञी तिर्यंच-पञ्चेन्द्रिय मे आगति-179 भेदो से पूर्ववत्। गति 395 भेदो में-56 अन्तरद्वीप के पर्याप्त मनुष्य, 25

भवनपति के और 26 व्यन्तर के (यो कुल 51 जाति के देव) और पहली नारकी, इन 108 के पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से 216 और 179 पूर्व कहे हुए। इस प्रकार 395।

18 पाच सज्ञी तिर्यंच मे आगति-267 भेदो से-81 प्रकार के देव (ऊपर के चार देवलोक, नौग्रैवेयक, पाच अनुत्तर, इन 18 को छोडकर) 7 नारकी के पर्याप्त और पहले कहे हुए 179 भेद, ये सब मिलाकर 267 भेद हुए। इन पांचो की गति भिन्न-भिन्न इस प्रकार है।

जलचर की गति-527 भेदो मे। 563 भेदो मे से नौवे देवलोक से सर्वार्थसिद्धान्तिक के 18 जाति के देव के पर्याप्त और अपर्याप्त ये 36 कम करने से शेष बचे हुए 527।

उरपरिसर्प की गति-523 भेदो मे। 527 भेदो मे से छठी और सातवी नारकी का पर्याप्त और अपर्याप्त, ये 4 कम करने से शेष रहे हुए 523 भेद।

स्थलचर की गति-521 भेद की। 523 मे से पाचवी नारकी का पर्याप्त और अपर्याप्त ये 2 छोडकर।

खेचर की गति-519 भेद की। 521 मे से चौथी नारकी के पर्याप्त और अपर्याप्त ये 2 छोडकर।

भुजपरिसर्प की गति-517 भेद की। 519 मे से तीसरी नारकी के पर्याप्त और अपर्याप्त ये 2 छोडकर।

19 असंज्ञी मनुष्य मे आगति-171 भेद की। पहले कहे हुए 179 भेदो में से तेउकाय और वायुकाय के 8 भेद कम करके शेष बचे हुए। गति 179 भेद की-पूर्ववत्।

20 पन्द्रह कर्मभूमि के सञ्ज्ञी मनुष्य मे आगति 276 भेद की। 171 पूर्ववत् (असञ्ज्ञी मनुष्य की आगति के समान) 99 जाति के देव और पहली से 6 नारकी के पर्याप्त। गति 563 की।

21 तीस अकर्मभूमि के सञ्ज्ञी मनुष्य की आगति–20 की। 15 कर्मभूमि और 5 सञ्ज्ञी तिर्यंच, इन 20 बीस के पर्याप्त। उनकी गति भिन्न-भिन्न है।

पाच देवकुरु और पांच उत्तर कुरु इन दस क्षेत्रो के मनुष्यो की गति–128 की। 64 प्रकार के देव पर्याप्त और 64 अपर्याप्त।

पाच हरिवास और पाच रम्यक् वास, इन दस क्षेत्रो के मनुष्यो की गति–126 की। 128 मे से पहले किल्विषी के पर्याप्त और अपर्याप्त छोड कर।

पाच हैमवत और पाच हैरण्यवत, इन दस क्षेत्रो के मनुष्यो की गति 124 की। 126 मे से दूसरे देवलोक के पर्याप्त और अपर्याप्त छोड कर।

22 छप्पन अन्तरद्वीपो मे आगति 25 की। 15 कर्मभूमिज मनुष्य, 5 सञ्ज्ञी तिर्यंच और 5 असञ्ज्ञी तिर्यंच के पर्याप्त गति 102 की–25 भवनपति और 26 वाणव्यन्तर। इन 51 के पर्याप्त और 51 अपर्याप्त।

23 तीर्थंकर की आगति 38 की–35 वैमानिको के (किल्विषी छोड कर) और प्रथम 3 नारकी के पर्याप्त। गति—मोक्ष की।

24 चक्रवर्ती की आगति 82 भेद से—99 जाति के देवो मे से 15 परमाधामी और 3 किल्विषी, इन 18 को छोड कर शेष बचे हुए 81 देव और पहली नारकी के पर्याप्त। गति 14 की—7 नरक के पर्याप्त और अपर्याप्त। (यदि दीक्षा लेवे तो देवलोक या मोक्ष की।

भगवती सूत्र शतक 24वां उद्देशा 1 से 24 तक थोकड़ा 'गम्मा' का अधिकार

1 ला बोल घर 44 वैक्रिय के 34 और औदारिक के 10

वैक्रिय के 34 :

नैरयिक	भवनपति	वाणव्यतर
7	10	1
ज्योतिषी	वैमानिक	ग्रैवेयक
1	12	1
चार अनुत्तर विमान	सर्वार्थसिद्ध	
1	1	

औदारिक के 10 :

स्थावर	विकलेंद्रिय	तिर्यंच पचेन्द्रिय
5	3	1
मनुष्य		
1		

2 रा बोल जीव 48 : वैक्रिय 34 औदारिक 14

वैक्रिय के 34 :

नैरयिक	भवनपति	वाणव्यतर	ज्योतिषी
7	10	1	1
वैमानिक	ग्रैवेयक	चार अनुत्तर विमान	
12	1	1	
सर्वार्थसिद्ध			
1			

औदारिक के 14 :

स्थावर	विकलेंद्रिय	असन्नी तिर्यंच पचे.
5	3	1
सन्नी तिर्यंच पचे	युगलिया तिर्यंच	
असन्नी मनुष्य	सन्नी मनुष्य	युगलिया मनुष्य
1	1	1

3 रा वोल आगत के स्थान 321 · वैक्रिय मे 101 औदारिक मे 220 101 वैक्रिय मे आगत 101 जीवो की निम्न प्रकार—

3 पहली नारकी मे 3 जीव आवे-तिर्यंच पचेन्द्रिय के 2 असन्नी और सन्नी मनुष्य का 1 सन्नी ।

12 दूसरी नरक से सातवी नरक तक 6 घरो मे 2-2 जीव आते है । सन्नी तिर्यंच और सन्नी मनुष्य ।

55 दस भवनपति-एक वाणव्यतर इन ग्यारह घरो मे 5-5 जीव आते हैं । 11×5=55 । 3 तिर्यंच पचेन्द्रिय के (सन्नी, असन्नी, युगलिया) 2 मनुष्य (सन्नी, युगलिया)।

12 ज्योतिषी, पहला, दूसरा देवलोक इन 3 घरो मे 4-4 जीव आते हैं । सन्नी तिर्यंच, युगलिया तिर्यंच, सन्नी मनुष्य, युगलिया मनुष्य 3×4=12 ।

12 तीसरे से 8वे देवलोक तक इन छ घरो मे दो-दो जीव आते है । सन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य 6×2=12

7 9वें से 12 देवलोक 4 नोग्रैवेयक का 1, चार अनुत्तर विमान का 1, सर्वार्थसिद्ध का 1, इन 7 घरो मे 1 जीव आता है । सन्नी मनुष्य 7×1=7

220 औदारिक मे आगत 220 जीवो की निम्न प्रकार—2

78 पृथ्वी, पानी, वनस्पति मे 26-26 जीव आवे 26=3×78

14 वैक्रियका-भवनपति 10, वाणव्यन्तर 1, ज्योतिप 1, पहला देवलोक 1, दूसरा देवलोक ।

12 औदारिक के-5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पचेन्द्रिय के 2 सन्नी असन्नी-मनुष्य के 2 सन्नी और असन्नी ।

60 तेऊ, वाउ, तीन विकलेन्द्रिय इन 5 घरो मे औदारिक के 12-12 जीव आते है, 5×12=60 उपर्युक्त ।

39 तिर्यंच पचेन्द्रिय के घर में 39 जीव आते हैं। वैक्रिय के 27 और औदारिक के 12।

27 वैक्रिय के—नैरयिक 7 देवता 20 (दस भवनपति वाण-व्यन्तर ज्योतिषी 1 से 8वे देवलोक तक)

12 औदारिक के—उपर्युक्त

43 मनुष्य के घर मे 43 जीव आते हैं। वैक्रिय के 33 औदारिक के दस।

वैक्रिय के 33–10 भवनपति, 1 वाणव्यन्तर, 1 ज्योतिषी, 12 देवलोक, 1 नवग्रैवेयक, 1 चार अनुत्तर विमान, 1 सर्वार्थ सिद्ध, नैरयिक, 6 पहली से छठी नरक तक औदारिक के 10–1 पृथ्वी, 1 पानी, 1 वनस्पति, 3 विकलेन्द्रिय, 1 असन्नीतिर्यंच पचेन्द्रिय, 1 सन्नीतिर्यंच पचेन्द्रिय।

220 2 मनुष्य के, सन्नी मनुष्य, असन्नी मनुष्य।

4 चौथा बोले गम्मा 9

1 औधिक से औधिक
2 " से जघन्य
3 " से उत्कृष्ट
4 जघन्य से औधिक
5 " से जघन्य
6 जघन्य से उत्कृष्ट
7 उत्कृष्ट से अधिक
8 " से जघन्य
9 " से उत्कृष्ट

5 पाचवा बोल भव के स्थान 16

1भव का स्थान पहला असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मरके वैक्रिय के 12 घरो मे जावे।

दस भवनपति—1 वाणव्यन्तर, 1 पहली नारकी

1-कितनी स्थिति वाला जावे—ज अ मु. उत्कृष्ट करोड पूर्व ।

2-कितनी स्थिति पावे—ज दस हजार वर्ष उ पल्योपम का असख्यातवा भाग ।

3-कितना भव करे—ज उ दो भव करे ।

भव का स्थान दूसरा सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मरके वैक्रिय के 26 घरो मे जावे—पहली से छठी नारकी तक—6 देवता के 20 (8वें देवलोक तक) ।

1-कितनी स्थिति वाला जावे—ज अ. मु उत्कृष्ट करोड पूर्व ।

2-कितनी स्थिति पावे-ये वैक्रिय के 26 घरो मे ज.उ. जितनी-2 स्थिति है वह पा सकता है ।

3-कितना भव करे-ज 2 उ. 8 भव करे ।

3 भव का स्थान तीसरा सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मरकर सातवी नरक मे जावे ।

1-कितनी स्थिति वाला जावे—ज. अ मु. उत्कृष्ट करोड़ पूर्व ।

2-कितनी स्थिति पावे—ज. 12 सागरोपम उत्कृष्ट 33 सागरोपम ।

3-कितना भव करे—(1) जाने आश्री 6 गम्मा से (1,2, 4,5,7,8वा) ज. 3, उ. 7 भव करें ।

(2) जाने आश्री 3 गम्मा से (3,6,9) ज 3, उ 5 भव करे ।

(3) आने आश्री 1 से 6 गम्मा तक
ज 2 उ 6 भव करें।

(4) आने आश्री 3 गम्मा से (7,8,9)
ज 2 उ 4 भव करे।

4 भव का स्थान चौथा सन्नी मनुष्य मर कर वैक्रिय के 15 घरो मे जावे (दस भवनपति 1 वाणव्यन्तर, 1 ज्योतिषी) 1 पहला देवलोक, 1 दूसरा देवलोक, 1 पहली नारकी।

1-कितनी स्थिति वाला जावे—ज. पृथकत्व मास उ करोड पूर्व।

2-कितनी स्थिति पावे—अपने-2 स्थान के अनुसार।

3-कितना भव करे—ज 2 उ 8 भव करे।

5 भव का स्थान पाचवा सन्नी मनुष्य मर कर वैक्रिय के 11घरो मे जावे (देवताओ के 6 (3, 8वे देवलोक तक) नैरयिक के 5 (2री से 6ठी नरक तक)

1-कितनी स्थिति वाला जावे—ज. प्रत्येक वर्ष उ करोड पूर्व।

2-कितनी स्थिति पावे-अपने-2 स्थान के अनुसार

3-कितना भव करे-ज 2 उ 8 भव करे।

6 भव का स्थान छठा सन्नी मनुष्य मरकर वैक्रिय के पांच घरो मे जावे (9वे से 12वें देवलोक तक 4 नौ ग्रैवेयक का 1)।

1-कितनी स्थिति वाला जावे-ज पृथकत्व वर्ष उत्कृष्ट करोड पूर्व।

2-कितनी स्थिति पावे-अपने-2 स्थान के अनुसार।

3-कितने भव करे-जाने आश्री ज 3, उ 6 भव करे।
आने आश्री ज 2, 6 उ भव करे।

7 भव का स्थान सातवा-सन्नी मनुष्य मरके 4 अनुत्तर विमान के 1 घर मे जावे।

1 कितनी स्थिति वाला जावे—ज पृथकत्व वर्प उ करोड़ पूर्व

2 कितनी स्थिति पावे—ज 31 सागरोपम उत्कृष्ट 33 सागरोपम

3 कितने भव कर—जाने आश्री ज 3 उ. 5 भव करे।
आने आश्री ज 2 उ. 4 भव करे।

8 भव का स्थान आठवा-सन्नी मनुष्य मरकर सर्वार्थ सिद्ध मे जावे।

1. कितनी स्थिति वाला जावे—ज पृथकत्व वर्प उ करोड पूर्व

2 कितनी स्थिति पावे – अजघन्य अनउत्कृष्ट 33 सागरोपम

3 कितना भव करे– जाने आसरी 3 भव करे, आने आसरी 2 भव करे।

9 भव का स्थान नवा-सन्नी मनुष्य मरकर सातवी नरक मे जावे।

1 कितनी स्थिति वाला जावे—ज पृथकत्व वर्प उ करोड पूर्व।

2 कितनी स्थिति पावे—ज 22 सागरोपम उ 33 सागरोपम

3 कितना भव करे—ज उ 2 भव करे।

10 भव का स्थान दसवा-दो प्रकार के युगलिया मर कर वैक्रिय के 14 घरो मे जावे (10 भवनपति, वाणव्यतर, 1 ज्योतिपी,

1 ला 2 रा देवलोक) 1. कितनी स्थिति वाला जावे—

1 भवनपति वाणव्यतर मे जाने वाले की स्थिति ज करोड पूर्व जाजेरी उ 3 पल्योपम

2 ज्योतिषी मे जाने वाले की स्थिति ज पल्योपम का आठवा भाग उ 1 पल्योपम 1 लाख वर्ष

3 1 ला देवलोक मे जाने वाले की स्थिति ज 1 पल्योपम उ 3 पल्योपम

4 2 रे देवलोक मे जाने वाले की स्थिति ज 1 पल्योपम जाझेरी उ 3 पल्योपम

2 कितनी स्थिति पावे—

1 भवनपति असुर कुमार मे ज. 10 हजार वर्ष उ. 3 पल्योपम

2 शेष भवनपति नोनिकाय मे ज. 10 हजार वर्ष उ. देश-उणादो पल्योपम।

3. वाणव्यतर मे ज 10 हजार वर्ष उ. 1 पल्योपम

4 ज्योतिषी मे ज पल्य का आठवां भाग उ 1 पल्योपम 1 लाख वर्ष

5. 1 ला देवलोक मे ज 1 पल्योपम उ 3 पल्योपम

6 2 रे देवलोक मे ज 1 पल्योपम जाझेरी उ 3 पल्योपम

कितना भव करे—ज उ 2 भव करे।

11, भव का स्थान ग्यारहवां—14 प्रकार के वैक्रिय के जीव मर-कर पृथ्वी पानी वनस्पति मे जावे।

1. कितनी स्थिति वाले जावे—अपने-अपने स्थान के अनुसार

2. कितनी स्थिति पावे अपने-अपने स्थान के अनुसार

3 कितने भव करे–ज उ. 2 भव करें।

भव का स्थान बारहवा-4 स्थावर मरकर 5 स्थावर मे जावे
4×5=20=4

—वनस्पतिकाय मरकर 4 स्थावर मे जावे ।

1 कितनी स्थिति वाला जावे-अपने अपने स्थान के अनुसार

2 कितनी स्थिति पावे-अपने अपने स्थान के अनुसार

3 कितना भाव करे—ये 24 जीव 4 गम्मासे (1,2,4,5) ज 2 उ. असख्यात भव करे ।
शेष 5 गम्मासे ज 2 उ 8 भव करे ।
वनस्पतिकाय मरकर वनस्पतिकाय मे जावे 4 गम्मो से (1, 2 4, 5) ज 2 उ अनता भव करे शेष 5 गम्मासे ज 2 उ 8 भव करे ।

भव का स्थान तेरहवा—पाच स्थावर मरकर 3 विकलेन्द्रिय मे जावे 5×3=15
तीन विकलेद्रिय मरकर 5 स्थावर मे जावे । 3×5=15
तीन विकलेद्रिय मरकर 3 विकलेन्द्रिय मे जावे ।
3×3=9+15=39

1 कितनी स्थिति वाला जाने—अपने अपने स्थान के अनुसार
2 कितनी स्थिति पावे-अपने-अपने स्थान के अनुसार
3 कितना भव करे—4 गम्मासे (1,2,4,5) ज 2 उ सख्याता भव करे ।
शेष 5 गम्मासे ज 2 उ 8 भव करे ।

भव का स्थान चौदहवा-तिर्यच पचेन्द्रिय का 1 घर औदारिक के 12 प्रकार के जीव मरके तिर्यच पचेन्द्रिय के घर मे जावे ।
1. कितनी स्थिति वाला जावे—अपने-2 स्थान के अनुसार ।
2 कितनी स्थिति पावे—अपने-2 स्थान के अनुसार
3 कितना भव कर—ज 2 उ 8 भव करे ।

15 भवका स्थान पन्द्रहवां—मनुष्य का 1 घर औदारिक के दस प्रकार के जीव मरके मनुष्य के घर मे जावें। (नेऊ वाऊ को छोडकर।)

1 कितनी स्थिति वाला जावे—अपने-अपने स्थान के अनुसार।

2 कितनी स्थिति पावे—अपने-2 स्थान के अनुसार।

3 कितना भव करे—ज 2 उ 8 भव करे।

16 भव का स्थान सोलहवा। तेऊ वाउ के दो घर—सन्नी असन्नी मनुष्य मरकर तेऊ वाउ के दो घरो मे जावे।

1 कितनी स्थिति वाला जावे—अपने अपने स्थान के अनुसार।

2 कितनी स्थिति पावे—अपने 2 स्थान के अनुसार।

3 कितना भव करे—ज उ 2 भव करे।

6 छठा वोल गम्मा 2805

आगत के स्थान 321 वताये। ये सव जीव 9-9 गम्मे से यदि आते हो तो 321×9=2889 होते हैं। परन्तु इसमे 84 गम्मे टूटते हैं वे इस प्रकार—

60 सर्मूच्छिम मनुष्य मरकर औदारिक के दस घरो में जावे। 4,5,6 इन तीन गम्मो से जाता है। क्योकि समुर्च्छिम मनुष्य की अन्तर्मुहूर्त की स्थिति है। इसलिए शेष 6 गम्मा टूटते है। एक घर मे जाते हुए 6 गम्मा टूटते है तो 10 घर मे जाते हुए 60 गम्मे टूटते है।

6 सन्नी मनुष्य मरके सर्वार्थ सिद्ध मे जावे तो 3,6,9 वा इन तीन गम्मो से जाता है। शेष 6 गम्मे टूटते है। क्योकि

सर्वार्थ सिद्ध मे केवल अजघन्य अनउत्कृष्ट 33 सागरोपम की स्थिति है ।

6 सर्वार्थ सिद्ध के देवता मरकर मनुष्य के घर मे आवे तो 7, 8, 9 इन तीन गम्मो से आते हैं । शेष 6 गम्मा टूटते है ।

12 दो प्रकार के युगलिया मरकर ज्योतिप और 1, 2 देवलोक इन 3 घरो मे जाते है तब चौथा और छठा गम्मा टूटता है । 2+3=6×2=12

कुलगम्मा—टूटता गम्मा=खरा गम्मा
2889 — 84 = 2805

774 जघन्य उत्कृष्ट 2 भव के गम्मा
1646 जघन्य 2 उत्कृष्ट 8 भव के गम्मा
96 जघन्य 2 उत्कृष्ट असख्यात भव के गम्मा (भव का स्थान 12वा)
4 जघन्य 2 उत्कृष्ट अनता भव के गम्मा (" ")
156 जघन्य दो उत्कृष्ट सख्याता भव के गम्मा (भव का स्थान 13वा)

51	जघन्य तीन उत्कृष्ट 7 भव के गम्मा	भव का स्थान 6ठा मे 45 गम्मा
52	जघन्य दो उत्कृष्ट 6 भव के गम्मा	भव का स्थान तीसरा मे 6 गम्मा
12	जघन्य तीन उत्कृष्ट 5 भव के गम्मा	भव का स्थान 7वां मे 9 गम्मा
12	जघन्य दो उत्कृष्ट 4 भव के गम्मा	भव का स्थान 3 रा मे 3 गम्मा

3 जघन्य उत्कृष्ट 3 भव के गम्मा (भव का स्थान 8वां)

जघन्य उत्कृष्ट 2 भव के गम्मा 774 निम्न प्रकार—

12 असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मरकर वैक्रिय के 12 घर मे जावे

28 दो प्रकार के युगलिया मरकर वैक्रिय के 14 घर मे जावे

42 14 प्रकार के वैक्रियक देवता मरके पृथ्वी पानो वनस्पति में जावे (14×3=42)

82×9 =738—12 गम्मा टूटते हैं दो प्रकार के युगलिया मरकर ज्योतिपी पहला, दूसरा देवलोक मे जावे तो 4 था और छठा गम्मा टूटता कारण जो युगलिया की स्थिति है उससे

726 ज्यादा स्थिति देवता मे मिलती नही। 2×3=6×2=12

24 तेऊ, वाऊ के दो घर सन्नी मनुष्य 9 गम्मा से असन्नी मनुष्य 3 गम्मा से
12+12

9 सन्नी मनुष्य मरकर 7वी नरक में जावे 9 गम्मा से

3 सर्वार्थ सिद्ध के देवता मरकर मनुष्य मे जावे 7, 8, 9 वे 3, गम्मा से।

12 तिर्यंच पचेन्द्रिय और मनुष्य इन दो घरो मे 3 प्रकार के जीव (असन्नी तिर्यंच, सन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य) जब इन दो

774 घरो मे जाते हैं तब तीसरे और 9वें गम्मे से युगलिया मे जाना नियमा है। अत दो ही भव करते है।

3×2=6+2=12

जघन्य दो उत्कृष्ट 8 भव के गम्मा 1646 इस प्रकार—

936 सन्नी तिर्यच सन्नी मनुष्य मरकर वैक्रिय के 26 घरो मे जावे 2×26=52 वापिस ये ही वैक्रिय के 26 प्रकार के जीव मरकर तिर्यंच और मनुष्य के घर मे जावे 26×2=52+ =104×9=936

536 पृथ्वीकाय का एक घर—

40 पाच स्थावर 3 विकलेन्द्रिय ये 8 जीव 5 गम्मा से जाते हैं। $8 \times 5 = 40$

30 अ तिर्यंच पचेन्द्रिय 9 गम्मा से, सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय 9 गम्मा से, सन्नी मनुष्य 9 गम्मा से।

70 असन्नी मनुष्य 3 गम्मा से।

पृथ्वीकाय	अप्काय	तेऊकाय	वायुकाय
70	70	58	58

वनस्पतिकाय	वेइन्द्रिय	तेइन्द्रिय	चउइन्द्रिय =536
70	70	70	70

96 तिर्यंच पचेंद्रिय का 1 घर

725 स्थावर तीन विकलेन्द्रिय ये 8 जीव 9 गम्मा से जाते हैं। $8 \times 9 = 72$

24 सन्नी तिर्यंच 7 गम्मा से असन्नी तिर्यंच 7गम्मा से सन्नी मनुष्य 7 गम्मा से असन्नी मनुष्य 3 गम्मा से=24

78 मनुष्य का एक घर

54, तीन स्थावर तीन विकलेन्द्रिय 6 जीव 9 गम्मा से $6 \times 9 = 54$

24 असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय 7 गम्मा से, सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय 7 गम्मा से

सन्नी मनुष्य 7 गम्मा से, असन्नी मनुष्य 3 गम्मा से

7 सातवां बोल रिद्धि के द्वार 20

1 उपपात 2 परिणाम 3 सहनन 4 अवगाहन 5 सठाण 6 लेश्या 7 दृष्टि 8 ज्ञान अज्ञान 9 योग 10 उपयोग 11 सज्ञा 12 कपाय 13 इन्द्रिय 14 समुद्घात 15 वेदना 16 17 आयुष्य 18 अध्यवसाय 19 अनुवन्ध 20 कायसवेद।

8 आठवा बोल नाणत्ता (अन्तर, फरक) पडे 9 जगह।
1 अवगाहना 2 लेश्या 3 दृष्टि 4 ज्ञान-अज्ञान 5 योग 6 समुद्घात 7 आयुष्य 8 अध्यवसाय 9 अनुबन्ध।

9 नवमा बोल णाणत्ता पडे 1998
औदारिक से वैक्रिय मे जाने के नाणता 715 निम्न प्रकार–

60 असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मरके वैक्रिय के 12 घर मे जावे नाणता पडे 5-5, 12×5=60 जघन्य गम्मा 3 मे (4, 5, 6)नाणता पडे 3, 1 आयुष्य अन्तरमुंहूर्त का 2 अध्यवसाय नारकी मे जाने वाले के अप्रशस्त देवता मे जाने वाले के प्रशस्त। 3 अनुबन्ध आयुष्यवत उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणता पडे 2, 1 आयुष्य करोड पूर्व का 2 अनुबन्ध आयुष्यवत्।

267 सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मरकर वैक्रिय के 27 घरो मे जावे (7 नारकी 20 देवता 8वे देवलोक तक) नाणता पडे 10-10। 27×10=270—3=267

6, 7, 8वो देवलोक मे लेश्या का नाणता नही पड़ता कारण 6, 7, 8वो देवलोक मे एक शुक्ललेश्या है। अन्तर्मुंहूर्त मे जाने वाले तिर्यंच के शुक्ललेश्या अनिवार्य है। अत छः ही लेश्या का स्पर्श कर सकता है।

जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 8

[1] अवगाहना—ज अगुल के असख्यातवो भाग उ प्रत्येक धनुष को।

[2] लेश्या—नारकी मे जाने वाले मे 3 भवनपति, वाणव्यन्तर ज्योतिषी, पहला, दूसरा देवलोक तक जाने वाले मे लेश्या 4 तीसरे, चौथे, 5वो देवलोक मे जाने वाले मे नाणत्ता नही है।

[3] दृष्टि—नारकी से ज्योतिषी तक जाने वाले मे 1 मिथ्या दृष्टि पहले देवलोक से 8वे देवलोक मे जाने वाले मे दृष्टि 2।

[4] ज्ञान—अज्ञान नारकी से ज्योतिषी तक 2 अज्ञान, पहले देवलोक से 8वे देवलोक तक जाने वाले मे दो ज्ञान दो अज्ञान।

[5] समुद्घात—3

[6] आयुष्य—अन्तर्मुहूर्त का

[7] अध्यवसाय—नारकी मे जाने वाले मे अप्रशस्त, देवता मे जाने वाले मे प्रशस्त।

[8] अनुबन्ध—आयुष्यवत्

उत्कृष्ट गम्मा मे नाणता पडे 2

[1] आयुष्य करोड पूर्व का [2] अनुबन्ध—आयुष्यवत्

120 सन्नी मनुष्य मरकर वैक्रिय के 15 घरो मे जावे। नाणत्ता पडे 8, 15×8=120। जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 5

(1) अवगाहना—पृथक्त्व अगुल।
(2) ज्ञान-अज्ञान—तीन ज्ञान 3 अज्ञान की भजना
(3) समुद्घात—पाच
(4) आयुष्य—पृथक्त्व मास
(5) अनुबध—आयुष्यवत्

उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 3

(1) अवगाहना—पाच सौ धनुष की
(2) आयुष्य—करोड पूर्व का
(3) अनुबध—आयुष्यवत्

114 सन्नी मनुष्य मरकर वैक्रिय के 19 घरो मे जावे नाणत्ता पडे 6–6, 19 × 6=114

जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 3

(1) अवगाहना—पृथकत्व हाथ की
(2) आयुष्य पृथकत्व वर्ष
(3) अनुबध—आयुष्यवत्

उत्कृष्ट के गम्मा मे नाणता पडे 3
(1) अवगाहना—500 धनुष की
(2) आयुष्य—करोड पूर्व
(3) अनुवध—आयुष्यवत्

70 तिर्यंच का युगलिया मर कर वैक्रिय के 14 घर में जावे नाणत्ता पडे 5-5, 14 × 5=70

जघन्य के गम्मा 3 मे नाणता पडे 3

(1) अवगाहना भवनपति वाणव्यतर देवो मे जाने वालों की ज प्रत्येक धनुष उ हजार धनुप जाभेरी।

ज्योतिपी मे जानेवाले की अवगाहना ज प्रत्येक धनुष उ. 1800 धनुप जाभेरी। 1 ले देवलोक मे जाने वाले की अवगाहना ज प्रत्येक धनुव्य उ 2 गाउ। दूसरे देवलोक मे जाने वाले की अवगाहना ज प्रत्येक धनुष उ 2 गाऊ जाभेरी।

(2) आयुष्य भवनपति वाणव्यतर मे जाने वाले का आयुष्य करोड पूर्व जाभेरी, ज्योतिपी मे जाने वाले का पल्य का आठवां भाग 1 ले देवलोक मे जाने वाले की 1 पल्योपम 2 रे देवलोक मे जाने वाले की 1 पल्योपम जाभेरी।

(3) अनुवन्ध–आयुष्यवत्

उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2

(1) आयुष्य 3 पल्योपम का

(2) अनुवन्ध-आयुष्यवत्

84 मनुष्य के युगलिया मरकर वैक्रिय के 14 घरों मे जावे। नाणत्ता पडे 6–6, 14×6=84 जघन्य के गम्मा मे नाणत्ता पडे 3।

(1) अवगाहना–भवनपति वाणव्यतरो मे जाने वालो की अवगाहना 500 धनुष जाभेरी ज्योतिषी मे जाने वालो की अवगाहना 900 धनुप जाभेरी 1 देवलोक मे जाने वाले अवगाहना 1 गाऊ 2 रे देवलोक मे जाने वालो की 1 गाऊ जाभेरी।

(2) आयुष्य—भवनपति वाणव्यतर मे जाने वालो की आयुष्य करोड पूर्व जाभेरी, ज्योतिषी मे जाने वाले का आयुप्य पल्य का आठवा भाग, 1 ले देवलोक मे जाने वाले का आयुप्य 1 पल्योपम, दूसरे देवलोक मे जाने वाले का 1 पल्योपम जाभेरी।

(3) अनुवन्ध–आयुष्यवत्

उत्कृष्ट की गम्मा मे नाणत्ता पडे 3

(1) अवगाहना–3 गाऊ की

—(2) आयुष्य—3 पल्योपम का

715 अनुवन्ध—आयुष्यवत्

वैक्रिय से औदारिक मे जाने का नाणत्ता 404 निम्न प्रकार

42 14 प्रकार के देवता मरकर पृथ्वी पानी वनस्पति मे जावे। 14×3=42।

27 27 प्रकार के वैक्रिय के जीव मरकर तिर्यंच के घर में जावे।
32 32 प्रकार के वैक्रिय के जीव मरकर मनुष्य के घर में
——जावे। अर्थात् (वैक्रिय के कुल 34 जीवो मे से 7 वी
101 नरक और सर्वार्थ सिद्ध को छोड कर)

+4 जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2 आयुष्य और
——अनुबंध।

404 उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2 " " ।
औदारिक से औदारिक मे जाने का नाणत्ता 879

6 पृथ्वीकाय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे-नाणत्ता पडे 6। जघन्य के गम्मा मे नाणत्ता पडे 4

(1) लेश्या—तीन (2) आयुष्य—अन्तर्मुहूर्त का (3) अध्यवसाय—अप्रशस्त (4) अनुबध—आयुष्यवत्।
उत्कृष्ट के गम्मा मे नाणत्ता पडे 2

(1) आयुष्य–22 हजार वर्ष का (2) अनुबंध आयुष्यवत्

6 अपकाय मरकर पृथ्वी काय मे जावे – नाणत्ता पडे 6 जघन्य के गम्मा 3 मे नाणता पडे 4—पृथ्वीकाय के माफिक
उत्कृष्ट के गम्मा मे नाणत्ता पडे 2

(1) आयुष्य–7 हजार वर्ष (2) अनुवंध-आयुष्यवत्

5 तेऊकाय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे–नाणत्ता पडे 5 जघन्य के गम्मा मे नाणत्ता पडे 3 (उपरोक्त 4 में लेश्या को छोड कर)

उत्कृष्ट के गम्मा मे नाणत्ता पडे 2

(1) आयुष्य—3 अहोरात्रि (2) अनुवंध-आयुष्यवत्

6 वायुकाय मरकर पृथ्वीकाय में जावे—नाणत्ता पडे 6 जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 4

(1) समुद्घात—तीन (2) आयुष्य—अतर्मुहूर्त का (3) अध्यवसाय—अप्रशस्त (4) अनुबध-आयुष्यवत्

उत्कृष्ट के गम्मा मे नाणत्ता पडे 2

(1) आयुष्य-3000 वर्ष का (2) अनुबंध-आयुष्यवत्

7 वनस्पतिकाय मरकर पृथ्वीकाय में जावे—नाणत्ता पडे 7 जघन्य के गम्मा मे नाणत्ता पडे 5

(1) अवगाहना-अ गुल के असख्यातवें भाग (2) लेश्या-3 (3) आयुष्य-अ तर्मुहूर्त (4) अध्यवसाय-अप्रशस्त (5) अनुबध—आयुष्यवत्

उत्कृष्ट गम्मा मे नाणत्ता पडे 5

(1) आयुष्य 10000 वर्ष का (2) अनुबध-आयुष्यवत्

9 बेइन्द्रिय मरकर पृथ्वीकाय में जावे नाणत्ता पडे 9 जघन्य के गम्मा 3 में नाणत्ता पडे 7

अवगाहना—अ गुल का असख्यातवा भाग (2) दृष्टि—1 मिथ्यादृष्टि (3) ज्ञान-अज्ञान—2 अज्ञान (4) योग 1 काया का (5) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का (6) अध्यवसाय-अप्रशस्त (7) अनुबध—आयुष्यवत् ।

उत्कृष्ट गम्मा मे नाणत्ता पडे 2

(1) आयुष्य—12 वर्ष का (2) अनुबध—आयुष्यवत्

9 तेइन्द्रिय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे नाणत्ता पडे 9 जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 7 (उपरोक्त माफिक)
उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2

(1) आयुष्य—49 अहोरात्रि (2) अनुबध—आयुष्यवत्

9 चउरिंद्रिय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे नाणत्ता पडे 9 जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 7 (उपरोक्त बेइन्द्रिय के समान) उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2 (1) आयुष्य—6 महीने का (2) अनुबध—आयुष्यवत् ।

9 असन्नी तिर्यंच पंचन्द्रिय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे नाणत्ता पडे 2 जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 7 (उपरोक्त बेइ-द्रिय के समान)

उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2 (1) आयुष्य—करोड पूर्व का (2) अनुबध—आयुष्यवत्

11 सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे नाणत्ता पडे 11

जघन्य के गम्मा मे नाणत्ता पडे 9

(1) अवगाहना—अ गुल के असख्यातवे भाग (2) लेश्या-तीन (3) दृष्टि—1 मिथ्यादृष्टि (4) ज्ञान-अज्ञान-2 ज्ञान (5) योग—1 काया का (6) समुद्घात—तीन (7) आयु-ष्य—अन्तर्मुहूर्त का (8) अध्यवसाय—अप्रशस्त (9) अनु-बध—आयुष्यवत्

उत्कृष्ट के गम्मा के नाणत्ता पडे 2

(1) आयुष्य—करोड पूर्व का (2) अनुबध—आयुष्यवत्

12 सन्नी मनुष्य मरकर पृथ्वीकाय मे जावे-नाणत्ता पडे 12 जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 9 (तिर्यंच के समान समझना)

उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 3

——(1) अवगाहना—500 धनुष्य की (2) आयुष्य—करोड 89 पूर्व की (3) अनुबध—आयुष्यवत्

पृथ्वीकाय मे	अपकाय मे	तेऊकाय मे	वायुकाय में
89	89	89	89

असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय में	मनुष्य में	=879
89	78	

715 औदारिक से वैक्रिय मे जाणे का नाणता

704 वैक्रिय से औदारिक मे जाणे का नाणता

879 औदारिक से औदारिक मे जाणे का नाणता

———

1998

---

102 बोल का बासठिया

श्री पन्नवणा सूत्र के तीसरे पद मे 102 बोल का वर्णन है, वह बासठिया युक्त इस प्रकार है:—

द्वारः—(1) जीव, (2) गति, (3) इन्द्रिय, (4) काय, (5) योग, (6) वेद, (7) कषाय, (8) लेश्या, (9) दृष्टि, (10) सम्यक्त्व, (11) ज्ञान, (12) दर्शन, (13) सयम, (14) उपयोग, (15) आहार, (16) भाषक, (17) परित्त, (18) पर्याप्त, (19) सूक्ष्म, (20) सज्ञी, (21) भव्य, (22) चरम ।

1. जीव द्वार

मार्गणा	जीव	गुण-स्थान	योग	उप-योग	लेश्या
1 समुच्चय जीव मे	14	14	15	12	6
2 नरक मे	3	4	11	9	3
3. तिर्यंच मे	14	5	13	9	6
4 मनुष्य मे	3	14	15	12	6
5 देव मे	3	4	11	9	6

अल्प-बहुत्वः—सबसे थोडे मनुष्य, उनसे नारकी असख्यात गुण, उनसे देव असख्यात गुण, उनसे तिर्यंच अनन्त गुण और उनसे समुच्चय जीव विशेपाधिक।

2. गति द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ	लेश्या
1. नरक गति मे	3	4	11	9	3
2 तिर्यच गति मे	14	5	13	9	6
3. तिर्यचिनी मे	2	5	13	9	6
4 मनुष्य गति मे	3	14	15	12	6
5. मनुस्यिनी मे	2	14	13	12	6
6. देव गति मे	3	4	11	9	6
7. देवी मे	2	4	11	9	4
8. सिद्ध गति में	0	0	0	2	0

अल्प-बहुत्व—सबसे थोडे मनुष्यिनी, उनसे मनुष्य असस्यात गुण, उनसे नारकी असस्यात गुण, उनसे तिर्यचिनी असख्यातगुण, उनसे देव असख्यात गुण, उनसे देवी सख्यात गुण, उनसे सिद्ध अनन्नत गुण और इनसे तिर्यच अनन्त गुण है।

3· इन्द्रिय द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ.	ले
1 सइन्द्रिय मे	14	12	15	10	6
2 स्केन्द्रिय मे	4	1	5	3	4
3 वेइन्द्रिय में	2	2	4	5	3
4 तेइन्द्रिय मे	2	2	4	5	3
5 चौरिन्द्रय मे	2	2	4	6	3
6 पचेन्द्रिय मे	4	12	15	10	6
7 अनिन्द्रय मे	1	2	6	2	1

अल्प-बहुत्व—सबसे थोडे पचेन्द्रिय, उनसे चौरिन्द्रय विशेपाधिक, उनसे तेइन्द्रिय विशेपाधिक, उनसे वेइन्द्रिय विशेपाधिक, उनसे अनिन्द्रिय अनन्त गुण, उनसे एकेंद्रिय अनन्त गुण और उनसे सइन्द्रिय विशेपाधिक।

4 काय द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ	ले
1 सकाय मे	14	14	15	12	6
2 पृथ्वीकाय में	4	1	3	3	4
3 अप्काय मे	4	1	3	3	4
4 तेऊकाय मे	4	1	3	3	3
5 वायुकाय मे	4	1	5	3	3
6 वनस्पति काय मे	4	1	3	3	4
7. त्रसकाय मे	10	14	15	12	6
8 अकाय मे	0	0	0	2	0

अल्प-बहुत्व – सबसे थोडे त्रसकाय, उनसे तेउकाय असख्यात गुण, उनसे पृथ्वीकाय विशेपाधिक, उनसे अप्काय विशेपाधिक, वायुकाय विशेपाधिक, उनसे अकाय अनन्त गुण, उनमे वनस्पतिकाय अनन्त गुण उनसे सकाय विशेपाधिक है।

5. योग द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ	लेश्या
1 सयोगी में	14	13	15	12	6
2 मनयोगी में	1	13	14	12	6
3 वचनयोगी में	5	13	14	12	6
4 काय योगी में	14	13	15	12	6
5. अयोगी मे	1	1	0	2	0

अल्प-बहुत्व—सबसे थोडे मन-योगी, उनसे वचन योगी, असख्यात गुण, उनसे अयोगी अनन्त गुण, उनसे काय योगी अनन्त गुण और उनसे सयोगी विशेपाधिक है।

6. वेद द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ	लेश्या
1 सवेदी मे	14	9	15	10	6
2 पुरुष वेद मे	2	9	15	10	6
3 स्त्री वेद मे	2	9	13	10	6
4 नपुंसक वेद मे	14	9	15	10	6
5 अवेदी मे	1	6	11	9	1

अल्प-बहुत्व—सबसे थोड़े पुरुष वेदी, उनसे स्त्री वेदी सख्यात गुण, उनसे अवेदी अनन्त गुण, उनसे नपुंसक वेदी अनन्त गुण, उनसे सवेदी विशेपाधिक है।

7. कषाय द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो.	उ	लेश्या
1 सकषायी मे	14	10	15	10	6
2 क्रोधकषाय मे	14	9	15	10	6
3 मान कषाय मे	14	9	15	10	6
4 माया कषाय मे	14	9	15	10	6
5. लोभ कषाय मे	14	10	15	10	6
6 अकषायी मे	1	4	11	9	1

अल्प-बहुत्व—सबसे थोडे अकषायी, उनसे मानी अनन्त गुण, उनसे क्रोधी अनन्त गुण, उनसे मायी विशेषाधिक, उनसे लोभी विशेषाधिक और उनसे सकषायी विशेषाधिक है।

8. लेश्या द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ	ले
1 सलेशी मे	14	13	15	12	6
2. कृष्ण लेशी मे	14	6	15	10	1
3. नील लेशी मे	14	6	15	10	1
4. कापोत लेशी मे	14	6	15	10	1
5 तेजो लेशी मे	3	6	15	10	1
6 पदम लेशी मे	2	6	15	10	1
7 शुक्ल लेशी मे	2	13	15	12	1
8. अलेशी मे	1	1	0	2	0

अल्प-बहुत्त्व—सबसे थोडे शुक्ल लेशी, उनसे पदम लेशी सख्यात गुण, उनसे तेजो लेशी सख्यात गुण, उनसे अलेशी अनन्त गुण, उनसे कापोत लेशी अनन्त गुण, उनसे नील लेशी अन्नत गुण, उनसे कृष्ण लेशी विशेपाधिक और उनसे सलेशी विशेषाधिक है।

9. दृष्टि द्वार

मार्गणा	जी.	गु.	यो	उ	ले.
1 सम्यग दृष्टि में	6	12	15	9	6
2 मिथ्या दृष्टि मे	14	1	13	6	6
3 मिश्र दृष्टि मे	1	1	10	6	6

अल्प-बहुत्त्व—सबसे थोडे मिश्र दृष्टि, उनसे सम्यग् दृष्टि अनन्त गुण और उनसे मिथ्या दृष्टि अनन्त गुण।

10. सम्यक्त्व द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ	लेश्या
1 सास्वादन सम्यक्त्व में	6	1	13	6	6
2 क्षयोपशम सम्यक्त्व मे	2	4	15	7	6
3 वेदक सम्यक्त्व मे	2	4	15	7	6
4 उपशम सम्यक्त्व में	2	8	15	7	6
5 क्षायिक सम्यक्त्व में	2	11	15	9	6

अल्प-बहुत्त्व—सबसे थोडे सास्वादन समकिती, उनसे उपशम समकिती सख्यात गुण, उनसे मिश्र दृष्टि असख्य गुण, उनसे क्षयोपशम समकिती असख्य गुण, उनसे वेदक समकिती विशेपाधिक, उनसे क्षायिक समकिती अनन्त गुण और उनसे समुच्चय समकिती विशेपाधिक।

11. ज्ञान द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो.	उ	लेश्या
1 सज्ञानी मे	6	12	15	9	6
2 मति-श्रुतज्ञानी में	6	10	15	7	6
3 अवधि-ज्ञानी मे	2	10	15	7	6
4 मन पर्याय ज्ञानी में	7	1	14	7	6
5 केवल ज्ञानी मे	2	1	7	2	1
6 मतिश्रुत अज्ञानी मे	14	2	13	6	6
7 विभग ज्ञानी मे	2	2	13	6	6

अल्प बहुत्व—सबसे थोडे मन पर्यायज्ञानी, उनसे अवधि-ज्ञानी असख्यात गुण, उनसे मतिश्रुत विशेषाधिक, उनसे विभग ज्ञानी असख्यात गुण, उनसे केवल ज्ञानी अनन्त गुण, उनसे सज्ञानी विशेषाधिक, उनसे मतिश्रुत अज्ञानी अनन्त गुण और उनसे समुच्चय अज्ञानी विशेषाधिक ।

12. दर्शन द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ	लेश्या
1 चक्षुदर्शन मे	6	12	14	10	6
2 अचक्षु दर्शन में	14	12	15	10	6
3 अवधि दर्शन मे	2	12	15	10	6
4 केवल दर्शन मे	1	2	7	2	1

अल्प-बहुत्व—सबसे थोड़े अवधि दर्शनी, उनसे चक्षुदर्शनी असख्यात गुण. उनसे केवल दर्शनी अनन्त गुण और उनसे अचक्षु-दर्शनी अनन्त गुण है ।

13. संयम द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ	लेश्या
1 समुच्चय सयती मे	1	9	15	9	6
2 सामायिक सयती मे	1	4	14	7	6
3 छेदोपस्थानीय सयतमे	1	4	14	7	6
4 परिहार विशुद्ध सयत मे	1	2	9	7	3
5. सूक्ष्म सपराय सयत मे	1	1	9	7	1
6 यथाख्यात सयत मे	1	4	11	9	1
7 सयता सयत मे	1	1	12	6	6
8 असयत मे	14	4	13	9	6
9 नो-सयत नो-असयत नो सयता सयत में	0	0	0	2	0

अल्प-बहुत्त्व—सवसे थोडे सूक्ष्म सपराय सयत, उनसे परिहार विशुद्ध सयत सख्यात गुण, उनसे यथाख्यात सयत सख्यात गुण, उनसे छेदोपस्थानीय सख्यात गुण, उनसे सामायिक सयत सख्यात गुण, उनसे समुच्चय सयत विशेषाधिक उनसे सयता सयत असख्य गुण, उनसे नो सयत नो असायता नो सयता सयत अनन्त अनन्त गुण और उनसे असायत अनन्त गुण है।

14 उपयोग द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ	ले
1 साकार उपयोग मे	14	14	15	12	6
2. अनाकार उपयोग में	13	13	15	12	6

अल्प-बहुत्त्व-सवसे थोड़े अनाकार उपयोगी और उनसे साकार उपयोगी सख्यात गुण।

15. आहारक द्वार

मार्गणा में	जो	गु.	यो.	उ	ले
1. आहारक मे	14	13	14	12	6
2. अनाहारक में	8	5	1	10	6

अल्प-बहुत्व–सबसे थोडे अनाहरक, उनसे आहारक असख्यात गुण है ।

16. भाषक द्वार

मार्गणा मे	जी	गु	यो	उ	ले
1 भाषक मे	5	13	14	12	6
2 अभापक मे	10	5	5	11	6

अल्प-बहुत्व–सबसे थोडे भापक, उनसे अभाषक अनन्त गुण है ।

17. पस्त्ति द्वार

मार्गणा	जी	गु.	यो.	उ	ले.
1 पस्ति मे	14	14	15	12	16
2 अपस्ति मे	14	1	13	6	6
3 नो पस्ति नो अपस्ति मे	0	0	0	2	0

अल्प-बहुत्व–सबसे थोडे पस्ति, उनसे नो पस्ति नोअपस्ति अनन्त गुण और उनसे अपस्ति अनन्त गुण है ।

18. पर्याप्त द्वार

मार्गणा	जी	गु.	यो	उ.	ले.
1 पर्याप्त मे	7	14	15	12	6
2. अपर्याप्त में	7	3	5	9	6
3 नो-पर्याप्त नो-अपर्याप्त मे	0	0	0	2	0

अल्प-बहुत्व–सबसे थोडे नो पर्याप्त नो अपर्याप्त उनसे अपर्याप्त अनन्त गुण और उनसे पर्याप्त सख्यात गुण है ।

19. सूक्ष्म द्वार

मार्गणा मे	जी	गु	यो.	उ.	ले.
1. सूक्ष्म मे	2	1	3	3	3
2. वादर मे	12	14	15	12	6
3 नो सूक्ष्म नो वादर मे	0	0	0	2	0

अल्प-बहुत्व–सबसे थोडे नो सूक्ष्म, नो वादर, उनसे वादर अनन्त गुण और उनसे सूक्ष्म असख्यात गुण है।

20. संज्ञी द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ.	ले
1 सज्ञी मे	2	12	15	10	6
2 असज्ञी मे	12	2	6	6	4
3 नो-सज्ञी नो असज्ञी मे	1	2	7	2	1

अल्प-बहुत्व–सबसे थोडे सज्ञी, उनसे नो-सज्ञी, नोअसज्ञी अनन्त गुण और उनसे असज्ञी अनन्त गुण है।

21. भव्य द्वार

मार्गणा मे	जी	गु	यो	उ	ले
1. भव्य मे	14	14	15	12	6
2 अभव्य मे	14	1	13	6	6
3 नो भव्य नो अभव्य में	0	0	0	2	0

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे अभव्य, उनसे नो भव्य नोअभव्य अनन्त गुण और उनसे भव्य अनन्त गुण है।

22. चरम द्वार

मार्गणा	जी	गु	यो	उ	लेश्या
1 चरम मे	14	14	15	12	6
2 अचरम मे	14	1	13	8	6

अल्प-बहुत्व—सबसे थोडे अचरम, उनसे चरम अनन्त गुण है।

जीव धड़ा

जीव के 563 भेद है। यथा –

नारकी के 14 भेद-सात नारकी के पर्याप्त और अपर्याप्त।

तिर्यंच के 48 भेद—

22 पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय और वायुकाय, इन चार प्रकार के स्थावर जीवो के प्रत्येक के सूक्ष्म और वादर तथा पर्याप्त और अपर्याप्त—ऐसे चार भेदो से कुल 16 भेद हुए। वनस्पतिकाय के सूक्ष्म, साधारण और प्रत्येक, इन तीन के पर्याप्त और अपर्याप्त, ये 6 भेद हुए। इस प्रकार पाच स्थावर के कुल 22 भेद हुए।

6 वेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौरेन्द्रिय। इन तीन विकलेन्द्रिय के पर्याप्त और अपर्याप्त ऐसे 6 भेद हुए।

20 पचेन्द्रिय तिर्यंच पाच प्रकार के—1 जलचर 2 स्थलचर 3 खेचर 4 उरपरिसर्प और 5 भुजपरिसर्प। ये पाचो ही असज्ञी और पाचो ही सज्ञी। ये 10 भेद हुए और इनके पर्याप्त, और अपर्याप्त, ऐसे 20 भेद हुए।

इस प्रकार तिर्यंच जीवो के कुल 48 भेद हुए।

मनुष्य के 303 भेद—

कर्मभूमिज मनुष्य के 15 भेद हैं। यथा-5 भरत × 5 ऐरा-

× पाच भरत इस प्रकार है—जम्बूद्वीप मे 1 भरत, धातकी खण्ड मे 2 और पुष्करार्द्ध मे 2, ये 5 हुए। इसी प्रकार ऐरावत और महाविदेह भी हैं और अकर्मभूमिज भी।

वत और 5 महाविदेह मे उत्पन्न मनुष्यों के 15 भेद। अकर्मभूमिज (भोगभूमिज) मनुष्य के 30 भेद है। यथा—5 देवकुरु 5 उत्तरकुरु, 5 हरिवास, 5 रम्यक्वास, 5 हेमवत और 5 ऐरण्यवत क्षेत्रो मे उत्पन्न मनुष्यो के 30 भेद। 56 अन्तरद्वीपो मे उत्पन्न होने वाले मनुष्यो के 56 भेद। ये सभी मिलाकर गर्भज मनुष्य के 101 भेद होते हैं। इनके पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से 202 भेद होते है। और इन 101 की अशुचि मे उत्पन्न सम्मूर्च्छिम मनुष्य के 101 भेद। कुल मिलाकर मनुष्य के 303 भेद होते है।

देव के 198 भेद—

10 भवनपति के 10 भेद—1 असुरकुमार 2 नागकुमार 3 सुवर्णकुमार 4 विद्युतकुमार 5 अग्निकुमार 6 उदधिकुमार 7 द्वीपकुमार 8 दिशाकुमार 9 पवनकुमार और 10 स्तनितकुमार।

15 परमाधार्मिक देवो के 15 भेद है। यथा—1 अम्ब 2 अम्बरीप 3 श्याम 4 शवल 5 रौद्र 6 महारौद्र 7 काल 8 महाकाल 9 असिपत्र 10 धनुप 11 कुम्भ 12 वालुका 13 वैतरणी 14 खरस्वर और 15 महाघोप।

26 वाणव्यन्तर के 26 भेद हैं। जैसे-पिशाचादि 8 (1 पिशाच 2 भूत 3 यक्ष 4 राक्षस 5 किन्नर 6 किम्पुरुप 7 महोरग और 8 गन्धर्व) आणपण्णे आदि 8 (1 आणपन्न 2 पाणपण्ण 3 इसिवाई 4 भूयवाई 5 कन्दे 6 महाकन्दे 7 कूह्माण्डे 8 पयगदेवे)। जृम्भक 10 (1 अन्न जृम्भक 2 पान जृम्भक 3 लयन जृम्भक 4 गयन जृम्भक 5 वस्त्र जृम्भक 6 फल जृम्भक 7 पुष्प जृम्भक 8 फलपुष्प जृम्भक 9 विद्या जृम्भक और 10 अग्नि जृम्भक)।

10 ज्योतिषी देवो के 5 भेद—1 चन्द्र 2 सूर्य 3 ग्रह 4 नक्षत्र और 5 तारा। इनके चर (भ्रमणशील) और अचर (स्थिर) के भेद से दस भेद हो जाते है।

12 वैमानिक देवो के कल्पोपपन्न और कल्पातीत दो भेद हैं। इनमे कल्पोपपन्न के 12 भेद है। जेसे—1 सौधर्म 2 ईशान 3 सनत्कुमार 4 माहेन्द्र 5 ब्रह्म 6 लातक 7 महाशुक्र 8 सहस्त्रार 9 अणात 10 प्राणत 11 आरण और 12 अच्युत।

9 कल्पातीत के दो भेद—ग्रैवेयक और अनुत्तर वैमानिक। ग्रैवेयक के 9 भेद—1 भद्र 2 सुभद्र 3 सुजात 4 सुमनस 5 सुदर्शन 6 प्रियदर्शन 7 आमोह 8 सुप्रतिबद्ध और 9 यशोधर।

5 अनुत्तर वैमानिक के पाच भेद है। जैसे—1 विजय 2 वैजयन्त 3 जयन्त 4 अपराजित और 5 सर्वार्थसिद्ध।

3 किल्विषिक देव—1 त्रैपल्योपमिक 2 त्रेसागरिक और 3 त्रयोदश सागरिक+।

9 लौकान्तिक देवो के नौ भेद—1 सारस्वत 2 आदित्य 3 वन्हि 4 वरुण 5 गर्दतोयक 6 तुषित 7 अव्याबाध 8 आग्नेय और 9 अरिष्ट।

इस प्रकार 10 भवनपति, 15 परमाधार्मिक, 16 वाणव्यन्तर, 10 जृम्भक, 10 ज्योतिषी, 12 वैमानिक, 3 किल्विषिक, 9 लौकान्तिक 9 ग्रैवेयक और 5 अनुत्तर वैमानिक। कुल मिला कर 99 भेद हुए। इनके पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से देव के 198 भेद होते हैं।

+ समानाकाश मे स्थित प्रथम और दूसरे देवलोक के नीचे त्रैपल्योपमिक, तीसरे और चौथे देवलोक के नीचे त्रैसागरिक और छठे देवलोक के नीचे त्रयोदश सागरिक किल्विषिक देव रहते है।

उपरोक्त 563 भेदो का सत्ताईस द्वारो से निरूपण किया जाता है—

द्वार—

1 जीव 2 गति 3 इद्रिय 4 काय 5 योग 6 वेद 7 कषाय 8 लेश्या 9 सम्यक्त्व 10 ज्ञान 11 दर्शन 12 सयम 13 उपयोग 14 आहारक 15 भापक 16 परित्त 17 पर्याप्त 18 सूक्ष्म 19 सन्नी 20 भव्य 21 चरम 22 सहनन 23 सठाण 24 क्षेत्र 25 शाश्वत 26 अमर और 27 गर्भज ।

1 जीव द्वार

समुच्चय जीव के भेद 563—नारकी के 14, तिर्यंच के 48, मनुष्य के 303 और देव के 198 ।

2 गति द्वार

1 नरक गति मे 14 । तिर्यंच मे 48 । तिर्यंचिनी मे 10 [पाच सन्नी तिर्यंच के पर्याप्त व अपर्याप्त] मनुष्य गति मे 303 मनुष्यिनी में 202 [101 सन्नी मनुष्य के पर्याप्त व अपर्याप्त 202] । देव मे 198 । देवी मे 128 [10 भवनपति, 15 परमाधामी 16 वाणव्यन्तर, 10 जृम्भक, 10 ज्योतिपी 1 पहला 1 दूसरा देवलोक के और 1 पहले किल्विपी-कुल 64 के पर्याप्त और अपर्याप्त] सिद्ध भगवान् मे गति नहीं ।

3 इन्द्रिय द्वार—

सइन्द्रिय मे 563—सभी भेद । एकेन्द्रिय मे 22, बेइन्द्रिय मे 2, तेइन्द्रिय मे 2, चौरिन्द्रिय मे 2 और पचेन्द्रिय मे 535 [563 मे से एकेन्द्रिय के 22 और विकलेन्द्रिय के 6 छोडकर] अनिन्द्रिय मे 15 [15 कर्मभूमि के पर्याप्त—13, 14 गुणस्थान

वाले] । श्रोत्रेन्द्रिय मे 535 [पचेन्द्रिय] चक्षुरिन्द्रिय मे 537 (चौरिन्द्रिय के पर्याप्त व अपर्याप्त वढे) घ्राणेन्द्रिय मे 539 (2 तेइन्द्रिय के पर्याप्त व अपर्याप्त वढे) । रसनेन्द्रिय के 541 (बेइन्द्रिय के पर्याप्त व अपर्याप्त वढे) । स्पर्शनेन्द्रिय के 563 ।

इन्द्रिय अलद्धिया मे (अलद्धिया-अनुपलब्ध जो नही है)

श्रोत्रेन्द्रिय के अलद्धिये मे 43–एकेन्द्रिय के 22 बेइन्द्रिय के 2 तेइन्द्रिय के 2 चौरिन्द्रिय के 2 और 15 कर्मभूमि के पर्याप्त मनुष्य (13, 14 गुणस्थानी ।)

चक्षुरिन्द्रिय के अलद्धिये में 41 (43 मे से चौरिन्द्रिय के 2 कम ।)

घ्राणेन्द्रिय के अलद्धिये मे 39 (41 मे से तेइन्द्रिय के 2 कम)

रसनेन्द्रिय के अलद्धिये मे 37 (39 मे से बेइन्द्रिय के 2 कम)

स्पर्शनेन्द्रिय के अलद्धिये मे 15 (पन्द्रह कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त । 13वें 14वें गुणस्थानी) ।

4. काय द्वार

सकाया मे 563 सभी । पृथ्वीकाय मे 4, अप्काय में 4 तेऊकाय मे 4, वायुकाय मे 4, वनस्पतिकाय मे 6 और त्रसकाय मे 541 (एकेन्द्रिय के 22 कम) । अकाया (सिद्ध) मे कोई भेद नही ।

5. योग द्वार

सयोगी मे 563–सभी ।

मनयोगी मे 212–नारकी के 7 तिर्यंच के 5 सन्नी मनुष्य के 101 और देव के 99 । ये सभी पर्याप्त ।

वचनयोगी मे 220–मनयोगी के 212 के सिवाय 5 असन्नी तिर्यंच और तीन विकलेन्द्रिय के पर्याप्त ।

काययोगी मे 563–सभी।

मन, वचन और काय योग मे 212–मनयोगी के समान।

व्यवहार भापा मे 220–वचन योगी के अनुसार।

औदारिक योग मे 351–तिर्यंच के 48 और मनुष्य के 303।

औदारिक मिश्र योग मे 247–तिर्यंच के 30–24 अपर्याप्त, और 5 पर्याप्त सन्नी तिर्यच तथा एक वायुकाय। मनुष्य मे 217–असन्नी मनुष्य के अपर्याप्त 101, सन्नी मनुष्य के अपर्याप्त 101 और कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त 15।

वैक्रिय योग मे 233—14 नारकी के सभी 5 सन्नी तिर्यच के पर्याप्त, 1 वायुकाय के पर्याप्त, 15 कर्मभूमि मनुष्य के पर्याप्त और 198 देव के सभी।

वैक्रिय मिश्र योग मे 219–वैक्रिय योग के 233 मे से 9 ग्रैवेयक और 5 अनुत्तर विमान के पर्याप्त के 14 भेद कम।

आहारक और आहारक मिश्र मे 15—कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त (कोई विशिष्ट सयमी सत)।

कार्मरण काययोग मे 347—नारकी के 7 तिर्यच के 24 देव के 99, असन्नी मनुष्य के 101 अपर्याप्त, सन्नी मनुष्य के 101 अपर्याप्त और 15 कर्मभूमिज के पर्याप्त (गु 13 के)।

आयोगी मे 15-कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त 14वे गुणस्थानी।

6 वेद द्वार–

सवेदी मे 563–सभी।

पुरुप वेद मे 410–पाच सन्नी तिर्यच के पर्याप्त और अपर्याप्त 10, सन्नी मनुष्य के पर्याप्त और अपर्याप्त 202 और देव के 198।

स्त्रीवेद मे 340–तीसरे देवलोक से बारहवे देवलोक तक 10, ...रे 1 व तीसरे 1 किल्विषी, नव लोकातिक 9, नव ग्रैवेयक 9 ...र पाच अणुत्तर विमान के 5 । इन 35 के पर्याप्त और अपर्याप्त 70 पुरुषवेदो के छोड कर शेप ।

नपु सक वेद मे 193–नारकी 14 तिर्यंच 48 असन्नी मनुष्य अपर्याप्त 101, कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त और अपर्याप्त 30।

एकवेद मे 223 नारकी 14, तिर्यंच 38 (48 मे से पाच ...सन्नी तिर्यच के पर्याप्त व अपर्याप्त 10 छोडकर) 101 असन्नी ...नुष्य के अपर्याप्त, ये सब नपु सक वेदी है । देव के 70 (तीसरे ...वलोक से लगाकर । ये सब पुरुष वेदी हैं) ।

दो वेद मे 300—मनुष्य अकर्मभूमि के 30, अन्तर द्वीप के ... पर्याप्त व अपर्याप्त 172 और देवलोक के 128 । (198 मे से ...प वेद के 70 कम) ।

तीन वेद मे 40–10 तिर्यंच-पाच सन्नी तिर्यंच के पर्याप्त और ...पर्याप्त । कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त और अपर्याप्त ।

अवेदी मे 15 कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त 15 ।

एकांत पुरुपवेद मे 70 तीसरे देवलोक से आगे के देव ।

एकात नपु सकवेद मे 153 नारकी के 14, तिर्यंच के 48, (48 मे से पाच सन्नी तिर्यंच के पर्याप्त व अपर्याप्त 10 कम) ...सन्नी मनुष्य के अपर्याप्त 101 ।

7 कषाय द्वार

सकपायी मे 563 भेद–सभी

अकपायी मे–15 कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त । गुणस्थान ... से 14 तक ।

8 लेश्या द्वार

सलेशी मे–563 ।

कृष्ण नील और कापोत, इन तीन लेश्या मे, प्रत्येक मे-459 ।

नारक मे 6-पहली दूसरी और तीसरी मे कापोत लेश्या पर्याप्त अपर्याप्त 6 । तीसरी चौथी और पाचवी मे नील लेश्या 6 । पाचवी छठी और सातवी कृष्ण लेश्या 6 ।

48 तिर्यंच मे ।

303 मनुष्य के ।

102 देव के–भवनपति के 10, परमाधामी के 15, व्यतर के 16, जृम्भक के 10 । इन 51 के पर्याप्त अपर्याप्त ।

तेजो लेश्या मे–343—

13 तिर्यंच मे–बादर–पृथ्वीकाय अप्काय और वनस्पतिकाय के अपर्याप्त मे । सन्नी-तिर्यंच पचेन्द्रिय के पर्याप्त अपर्याप्त के 10 ।

202 मनुष्य–सन्नी के पर्याप्त और अपर्याप्त के ।

128 देव के–भवनपति के 10, परमामो के 15, व्यन्तर के 16, जृम्भक के 10, ज्योतिषी के 10, वैमानिक के पहले के 1, दूसरे के 1 और प्रथम किल्विषी के 1 । इन 64 के पर्याप्त अप. ।

पद्म लेश्या मे—66 ।

10 तिर्यंच के-सन्नी पचेन्द्रिय के पर्याप्त अपर्याप्त ।

30 मनुष्य के-कर्मभूमि 15 के पर्याप्त अपर्याप्त ।

26 देव के- तीसरे 1 चौथे 1 और पाचवे 1 देवलोक दूसरे किल्विषी 1 और लोकन्तिक देव, 9 के पर्याप्त अपर्याप्त ।

शुक्ल लेश्या मे–84 ।

10 तिर्यंच सन्नी के पर्याप्त अपर्याप्त ।

30 कर्मभूमिज मनुष्य के ।

44 देव के-वैमानिक के छठे से 12वें तक देवलोक 7, तीसरे किल्विपी 1, ग्रैवेयक 9 और अनुत्तर 5। इन 22 के पर्याप्त अपर्याप्त ।

एकान्त कृष्णलेशी मे 4-छठी और सातवी नरक के पर्याप्त अपर्याप्त ।

एकान्त नील लेश्या मे 2-चौथी नरक के पर्याप्त अपर्याप्त ।

एकान्त कापोत लेश्या मे 4-पहली और दूसरी नरक के पर्याप्त अपर्याप्त ।

एकान्त तेजो लेश्या मे 26-ज्योतिपी देव के 10, वैमानिक के पहले 1 दूसरे 1 और प्रथम किल्विषी 1। इन 13 के पर्याप्त अपर्याप्त ।

एकान्त पद्म लेश्या मे—26। वैमानिक के 3, 4, 5 देवलोक, दूसरे किल्विपी और लोकान्तिक 9। इन 13 के पर्याप्त अपर्याप्त ।

एकान्त शुक्ल लेश्या मे-44। छठे देवलोक से 12वे तक 7, तीसरे किल्विपी 1 ग्रैवेयक 9 और अनुत्तर 5।

इन 22 के पर्याप्त अपर्याप्त। एक लेश्या मे 106।

10 नारक के तीसरी और पाचवी नारकी छोडकर शेप 5 के।

96 देव के ज्योतिपी के 10 वैमानिक के 38।

इनके पर्याप्त अपर्याप्त ।

दो लेश्या मे-4। तीसरी और पाचवी नरक के पर्याप्त अपर्याप्त ।

तीन लेश्या मे-136।

35 तिर्यंच के एकेन्द्रिय के 19 (पृथ्वी अप और वनस्पति के अपर्याप्त छोडकर) विकलेन्द्रिय के 6 और असन्नी पचेन्द्रिय के 10।

101 समूच्छिम मनुष्य के।

चार लेश्या मे-277।

3 तिर्यंच के-पृथ्वी, अप और वनस्पतिकाय के अपर्याप्त के।

172 मनुष्य के-अकर्मभूमि और अन्तर्द्वीपज के 86 के प अ.

102 देवो के-भवनपति, परमाधामी, व्यन्तर और जृम्भक के।

51 के प.अ

5 लेश्या मे-0 शून्य कोई नही।

छह लेश्या मे 40-सन्नी तिर्यंच के 10 और कर्मभूमि के मनुष्यो के 30।

अलेशी मे-15 कर्मभूमि के मनुष्य पर्याप्त के (14 वें गु)

9. सम्यक्त्व द्वार

सम्यग्दृष्टि मे 283

13 नारकी के (सातवी का अपर्याप्त छोडकर)

18 तिर्यंच के-10 सन्नी तिर्यंच के प अप। 5 असन्नी तिर्यंच और 3 विकलेन्द्रिय के अप.।

90 मनुष्य के-15 कर्मभूमि, 30 अकर्मभूमि, इन 45 के प. और अप।

162 देव के-(15 परमाधामी और 3 किल्विपी के प और अप.।

मिथ्यादृष्टि मे 553। 563 मे से पाच अनुत्तर विमान के प और अप ये 10 छोडकर।

मिश्रदृष्टि मे 103–नारकी के 7, तिर्यच के 5, कर्मभूमि मनुष्य के 15, देव, के 76 (परमाधामी के 15 किल्विषी के 3 और अनुत्तर के 5 ये 23 पर्याप्त कम करके)। सभी पर्याप्त ही है।

एकान्त सम्यग्दृष्टि मे 10—पाच अनुत्तर विमान के प. और अप ।

एकान्त मिथ्यादृष्टि मे 280–सातवी नारकी के अप 1, तिर्यंच के 30 (एकेन्द्रिय के 22, विकलेन्द्रिय के 3 और असन्नी पचेन्द्रिय के 5। इसके प) मनुष्य के 213 (असन्नी मनुष्य क अप 101, अतरद्वीप प और अप ।12) देव के 36–परमाधामो 15 और किल्विषी 3 के प और अपर्याप्त।

एक दृष्टि मे 290-एकान्त सम्यग्दृष्टि के 10 और एकान्त मिथ्यादृष्टि के 280। कुल 290।

दो दृष्टि मे 170–नारकी के 6 पहली से छठी तक के अप । तिर्यच के 13–पाच सन्नी तिर्यच, पाच असन्नी तिर्यच और तीन विकलेन्द्रिय, इनके अप । मनुष्य के 75। कर्मभूमि के अप 15 और अकर्मभूमि के प और अपर्याप्त 60। देव के 76-99 मे से 15 परमाधामी 3 किल्विषी तथा अणुत्तर विमान। ये 23 कम करके शेष सभी के अपर्याप्त।

तीन दृष्टि मे 103–नारकी के 7, सन्नी तिर्यच के 5, मनुष्य कर्मभूमिज के 15 और देव के 76। इन सभी के पर्याप्त (मिश्र-दृष्टि के समान)

सास्वादन समकित मे 213–नारकी के 13 (सातवी नारकी का अप छोड कर) तिर्यच मे 18 (5 असन्नी तिर्यच और 3

विकलेन्द्रिय के अप और सन्नी तिर्यंच के प. अप 10)। मनुष्य मे–पन्द्रह कर्मभूमि के पर्याप्त अपर्याप्त 30। देव मे 152–भवनपति 10, वाणव्यंतर 16, जृम्भक 10, ज्योतिषी 10, वैमानिक 12, लोकांतिक 9 और ग्रैवेयक 9 के प अप. (परमाधामी किल्विषी और अनुत्तर छोड कर)।

वेदक समकित मे 103–मिश्रदृष्टि के समान।

उपशम समकित मे 205—

13 नारक के—सातवी के अप को छोडकर।

10 तिर्यंच के—सन्नो पचेन्द्रिय के प अप।

30 मनुष्य के—कर्मभूमि 15 के प अप.।

152 देव के—15 परमाधामी 3 किल्विषी और 5 अनुत्तर के प अप छोडकर।

क्षायोपशमिक सम्यक्त्व मे—275। उपशम के 205 मे 30 अकर्मभूमि के मनुष्यो के 60 और 5 अनुत्तर के 10, ये 70 और मिलाने से 275।

क्षायिक सम्यक्त्व मे 262।

8 नारक के—प्रथम के चार नारक के प. अप।

2 तिर्यंच के—सन्नी थलचर युगल के प अप.।

90 मनुष्य के—15 कर्मभूमिज और 30 अकर्मभूमिज के प अपर्याप्त।

162 देव के—15 परमाधामी और 3 किल्विषी के प. अप. ऐसे 36 छोड़कर।

10. ज्ञान द्वार

समुच्चय वल ज्ञानी और मति-श्रुत ज्ञानी मे 283। सम्यक्त्व के समान।

अवधिज्ञानी में 210—

13 नारक मे—सातवी के अप छोडकर।

5 तिर्यञ्च मे—सज्ञी पचेन्द्रिय के प।

30 मनुष्य मे—15 कर्मभूमिज के प अप।

162 देव मे—15 परमाधामी और 3 किल्विषी के 36 छोडकर।

मन पर्यय और केवलज्ञानी मे—15 कर्मभूमिज मनुष्यो के प।

मतिश्रुत अज्ञान और समुच्चय अज्ञान मे—553 (पाच अनुत्तर विमानवासी देवो के 10 भेद छोडकर)।

विभगज्ञान मे—222।

14 नारक के प अप सभी।

5 तिर्यंच मे—सज्ञी पचेन्द्रिय के पर्याप्त।

15 मनुष्य मे—15 कर्मभूमिज के पर्याप्त।

188 देव मे—5 अनुत्तर देवो के प अप. छोडकर।

11. दर्शन द्वार

चक्षुदर्शन में 537—नारकी के 14, तिर्यच के 22— (चौरिन्द्रय, असन्नी और सन्नी पचेन्द्रिय, इन 11 के पर्याप्त अपर्याप्त)। मनुष्य के 303 और देव के 198।

अचक्षुदर्शन में 563—सभी।

अवधिदर्शन मे 247—नारकी के 14, सन्नी तिर्यंच प. के 5, कर्मभूमिज मनुष्य के प. अप. 30 और देव के 198।

केवलदर्शन मे 15—कर्मभूमि के मनुष्यो के पर्याप्त।

12. संयम द्वार

समुच्चय सयत और सामायिक, सूक्ष्म-सपराय और यथाख्यात चारित्र मे 15। पन्द्रह कर्मभूमि के मनुष्य के पर्याप्त।

छेदोपस्थानीय और परिहार-विशुद्धि चारित्र मे 10—5 भरत और 5 एरवत के मनुष्य के पर्याप्त।

सयतासयत मे 20। सन्नी तिर्यच के प 5 और कर्मभूमि के मनुष्य के प. 15।

असयत मे 563—सभी।

नो सयत नो असयत नो सयतासयन (सिद्ध) मे नही।

13. उपयोग द्वार

साकार और अनाकार उपयोग मे 563—सभी।

14. आहारक द्वार

आहारक मे 563—सभी।

अनाहारक मे 347—7 नारक, 24 तिर्यंच, 202 मनुष्य और 99 देव—ये सब पर्याप्त, तथा कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त 15 (13वें 14वे गुणस्थानो)।

15. भाषक द्वार

भापक मे 220 भेद—

7 नारक के पर्याप्त।

13 तिर्यंच के—3 विकलेन्द्रिय, 5 असन्नी और 5 सन्नी पचेन्द्रिय के पर्याप्त।

101 मनुष्य के—सन्नी मनुष्य के पर्याप्त।

99 देव के--सभी पर्याप्त देव।

अभाषक मे 358—

7 नारक के अपर्याप्त ।

35 तिर्यंच के—एकेन्द्रिय के 22 प अप. । विकलेन्द्रिय 3 अप. और सन्नी-असन्नी पचेन्द्रिय के अपर्याप्त 10

217 मनुष्य के—101 सन्नी और 101 असन्नी के अप. तथा 15 कर्मभूमि के प (अयोगी) ।

99 देव के—सभी अ ।

16. परित्त 20 भव्य और 21 चरम द्वार—

परित्त, भव्य, चरम और प्रत्येक मे 563 ।

अपरित्त अभव्य और अचरम मे प्रत्येक मे 553 (पाच अनुत्तर विमान के प अप छोडकर) ।

17. पर्याप्त द्वार

पर्याप्त मे 231—नारकी 7, तिर्यंच 24, मनुष्य 101 और देव 99 ।

अपर्याप्त मे 332-नारकी, 7 तिर्यंच 24, सन्नी मनुष्य 101असन्नी मनुष्य 101 और देव के 99 ।

18. सूक्ष्म द्वार

सूक्ष्म मे 10—पाच सूक्ष्म स्थावर के प. अप. ।

बादर मे 553—सूक्ष्म के 10 कम करके ।

19. सन्नी द्वार

सन्नी में 424—नारक के 14, तिर्यंच पंचेन्द्रिय के 10, मनुष्य के 202 (समूच्छिम छोडकर) और देव के 198 ।

असन्नी मे 191

1 नरक मे—पहली का अपर्याप्त ।

38 तिर्यच के—सन्नी के 10 छोडकर ।

101 मनुष्य के – असन्नी ।

51 देव के—10 भवनपति के, 15 परमाधामी के, 16 वाणव्यन्तर के, 10 जृम्भक के ।

ये सव अपर्याप्त है ।

22. संहनन द्वार

वज्र-ऋषभ-नाराच सहनन मे 212—सन्नी तिर्यच के 10 और मनुष्य के 202 (सन्नी तिर्यच और सन्नी मनुष्य के प अप)।

मध्य के चार सहनन मे 40-सन्नी तिर्यंच के 10, मनुष्य के 30 कर्मभूमिज मनुष्य के प अप मे ।

सेवार्त सहनन में 179—

48 तिर्यंच के

131 असन्नी मनुष्य के अप. 101 और कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त अपर्याप्त 30 ।

23. संस्थान द्वार

समचतुरस्त्र सस्थान में 410—

10 सन्नी तिर्यच के ।

202 सन्नी मनुष्य के ।

198 देव के—सभी ।

मध्य के चार सस्थान में 40 । सहनन के समान ।

हुडक सस्थान मे 193 । 14 नारक के. 48 तिर्यच के, 131 मनुष्य के (असन्नी मनुष्य के अप 101 और कर्मभूमिज मनुष्य के प अप 30) ।

24 क्षेत्र द्वार

एक भरत और ऐरावत क्षेत्र मे–51 । पाचो मे 63 ।

48 तिर्यंच के और 3 मनुष्य के। सन्नी मनुष्य का अप और पर्याप्त और असन्नी मनुष्य का अपर्याप्त ।

महाविदेह क्षेत्र मे 93 । 48 तिर्यच के । 45 मनुष्य के–सन्नी मनुष्य का अप 1, और पर्या 1, असन्नी मनुष्य अप 1 हेमवय 1, हैरण्यवय 1, हरिवास 1, रम्यक्वास 1, देवकुरु 1, और उत्तारकुरु 1 । इन छ के पर्याप्त अपर्याप्त समूच्छिम 18 ।

जम्बुद्वीप मे 75 । 48 तिर्यच के सभी ।

27 मनुष्य के–1 भरत, 1 ऐरावत, 1 महाविदेह, 1 हेमवय, 1 हैरण्थवय, 1 हरिवास, 1 रम्यक्वास, 1 देवकुरु, 1 उत्तरकुरु, ये 9 प. 9 अप और इनके 9 असन्नी के अप ।

लवण समुद्र मे 216 । 48 तिर्यच के, 168 मनुग्य के— छप्पन अतर द्वीप के प अप. 102 और इनके असन्नी के अप ।

घातकी खण्ड मे 102 । 48 तिर्यंच के । 54 मनुष्य के–2 भरत, 2 ऐरावत, 2 महाविदेह, 2 हेमवय, 2 हैरण्यवय, 2 हरिवास 2 रम्यक्वास, 2 देवकुरु, 2 उत्तरकुरु । इन 18 के प. अप और इसके असन्नी के अप ।

कालोदधि समुद्र मे 48 । 46 तिर्यंच के (48 मे से तेउकाय के प. और अप. 2 कम)

अर्घ पुष्कर व द्वीप मे 102 । घातकीखड के समान ।

अढाई द्वीप मे 351—

48 तिर्यंच के

303 मनुष्य के

अढाई द्वीप के वाहर 118-106—

46 तिर्यंच के (48 मे से वादर तेउकाय के प अप कम)

62 देव के-10 वाणव्यतर के, 16 जृम्भक के, 5 ज्योतिषी

अचर। इन 31 के प अप.।

नीचे लोक मे 115—

14 नारक के—

48 तिर्यंच के—

3 मनुष्य के-महाविदेह क्षेत्र की सलिलावती विजय के प.

अप और असन्नी के अप ।

50 देव के-10 भवनपति और 15 परमाधामी के प अप ।

ऊचे लोक मे 122—

46 तिर्यंच के (48 मे से वादर तेउकाय के प अप कम।

76 देव के-12 वैमानिक, 3 किल्विषी, 9 लोकांतिक, 9

ग्रैवेयक और 5 अणुत्तर विमान, इनके प. अप.।

तिर्च्छे लोक मे 423—

48 तिर्यंच के।

303 मनुष्य के।

72 देव के-16 वाणव्यन्तर, 10 जृम्भक और 10 ज्योतिषी

के प. अप.।

सिद्धशिला मे 12–सूक्ष्म पाच स्थावर और वादर पृथ्वीकाय के प अप ।

सिद्धशिला के ऊपर तथा सातवी नरक के नीचे, लोक के चरमान्त मे 12–सूक्ष्म पाच स्थावर और वादर वायुकाय के प अप. ।

25. शाश्वत द्वार

शाश्वत में 250—

7 नारक के ।

101 मनुष्य सन्नी के पर्याप्त ।

99 देव–सभी के पर्याप्त ।

43 तिर्यंच के–(पाच सन्नी तिर्यंच के अपर्याप्त कम) ।

अशाश्वत मे 313—

7 नारक के ।

202 मनुष्य के–सन्नी मनुष्य के 101 और असन्नी मनुष्यके 101

99 देव के ।

5 तिर्यंच के—सन्नी तिर्यंच के ।

ये सभी अपर्याप्त हैं ।

26. अमर द्वार

अमर मे 192 ।

7 नारक के ।

86 मनुष्य के—30 अकर्मभूमि और 56 अन्तर्द्वीप के ।

99 देव के ।

ये सभी अपर्याप्त अवस्था मे अमर होते हैं ।

मरने वाले 371—

7 नारक के।

48 तिर्यंच के।

217 मनुष्य के—101 असन्नी के अपर्याप्त, 101 सन्नी के पर्याप्त और 15 अकर्मभूमि के अपर्याप्त।

99 देव के पर्याप्त।

27. गर्भज द्वार

गर्भज मे 212—

10 तिर्यंच के सन्नी पचेन्द्रिय।

202 मनुष्य के—सन्नी मनुष्य के प अप.।

नो गर्भज में 351—

14 नारक के।

38 तिर्यंच के—सन्नो छोडकर।

101 मनुष्य—असन्नी मनुष्य के पर्याप्त।

198 देव—सभी।

सेवम्, भंते! सेवम्, भंते! सेवम्, भंते!

सावधान रहे क्रोध से

क्रोध क्यों उत्पन्न होता है :

1. अहंकार पर चोट लगने पर क्रोध उत्पन्न होता है।
2. जर, जोरु और जमीन के कारण क्रोध की उत्पति होती है।
3 खेत, वस्तु, शरीर और उपाधि इन चार कारणो से क्रोध पैदा होता है।
४. अनुचित व्यवहार भी क्रोध उत्पन्न करता है।
5. स्वार्थ पूर्ति मे बाधा पडने पर क्रोध उत्पन्न होता है।
6. भ्रम के कारण क्रोध पैदा होता है।
7. अधिक परेशान करने से क्रोध उफनता है।
8. धोखा देने पर क्रोध उत्पन्न होता है।
9 वैर, भाव, दुश्मनी से क्रोध जन्म लेता है।
10. दुर्वचन सुनकर भी क्रोध आता है।

क्रोध से हानियां :-

1. क्रोध भयानक दावानल है इसमें जो भी विचरण करता है वह जलकर भस्म हो जाता है।
2. जीवन रूपी प्याले में क्रोध जहर है, इसको जो भी पीता है वह विनाश की ओर जाता है।

3. क्रोधी व्यक्ति अच्छे बुरे का ज्ञान व विवेक खो बैठता है।
4. क्रोधी नेत्रशील होते हुवे भी अन्धा हो जाता है।
5. क्रोध करने से रक्त विष बन जाता है।
6. क्रोध करने से शारीरिक एवं मानसिक दोनो शक्तिया क्षीण होने लगती है।
7. क्रोध जीवन की समग्र शांति को अशांत कर देता है।
8. क्रोधी व्यक्ति हमेशा पागलपन मे ही जीता है।
9. अधिकाश रोगो का कारण सिर्फ क्रोध है।
10. क्रोध से प्रीति का नाश होता है।
11. क्रोधी व्यक्ति के पास कोई रहना नहीं चाहता है।
12 क्रोध से आत्मा का पतन होता है।
13. क्रोधी व्यक्ति निवृत गतियो मे भ्रमण करता है।
14. क्रोधी हर जगह से अनादर पाता है।
15. क्रोधी व्यक्ति मे दया एव करुणा का अभाव रहता है।
16. क्रोध उद्वेग पैदाकर सद्‌गति का नाश करता है।
17. क्रोध से दूसरा तो नही पर क्रोधी अवश्य भस्म हो जाता है।
18. क्रोध अग्नि है। यह अग्नि आत्मा के समस्त शुभ अनमोल गुणो को भस्म कर देती है।
19. क्रोध से चाण्डाल प्रवृत्ति पनपती है। राक्षसी भाव पैदा होते हैं। मौत की जड़ क्रोध है।
20. क्रोध से ज्ञान को क्षति पहुंचती है। मन चंचल होता है।
21. क्रोध से आखे लाल होती है। चेहरा डरावना लगने लगता है।

22. क्रोध से श्वांस की बिमारी होती है। उच्च रक्तचाप होता है, हृदय गति रुक जाती है। (हार्ट अटैक)

23. क्रोध से मस्तिष्क गरम हो जाता है। शरीर कांपने लगता है।

24. क्रोध से निकली वांणी, जहर है। शस्त्र का घाव भर जाता है पर क्रोधी के शब्दो के घाव कभी नहीं भरते हैं।

25. क्रोध के वश मे होकर व्यक्ति खुद मर जाता है, या किसी को मौत दे सकता है।

क्रोध पर विजय कैसे पाई जावे ?

1. क्रोध रूपी शत्रु का दमन क्षमा रूपी शस्त्र से हो सकता है।
2. जब तक क्रोध रहे तब तक मौन अवस्था मे रहे।
3. क्रोध शांत करने के लिए मासाहार त्यागने का संकल्प लें।
4. क्रोध को विवेक से जीता जा सकता है।
5. सहिष्णुता क्षमा भाव से क्रोध शांत रहता है।
6. क्रोध की बिमारी का इलाज समता एव सद्भाव है।
7. संत संगत से क्रोध शांत होता है।
8. क्रोध पर विजय पाने के लिए नम्रता एवं विनय रक्खें।
9. क्रोध आवे तो मुंह में पानी रखें।
10. क्रोध के समय धर्म मंत्रो का जाप करें।
11. क्रोध को शांत करने के लिए मन को शांत रखने का प्रयत्न करें। इन्द्रियो को वश में रखें।

क्रोध नहीं करने से लाभ :—

1. क्रोध न करने से व्यक्ति शक्तिशाली होता है।
2. क्रोध नहीं करने से वाणी में मिठास व प्रभाव रहता है।
3. क्रोध नहीं होने से मन स्वच्छ व तनाव रहित रहता है।
4. क्रोध नहीं करने से विवेक की प्राप्ति होती है एवं सब जगह प्रियपात्र बन जाता है।
5. क्रोध नहीं करने से धर्म का महत्व समझ में आता है। तपस्या का फल मिलता है। मन मुटाव नहीं होता है। आत्मा को शान्ति मिलती है।
6. क्रोध के अभाव में शत्रु भी मित्र बन जाते हैं।
7. क्रोध नही करने से धैर्य, सहनशीलता जैसे सद्गुणो की प्राप्ति होती है।
8. क्रोध नहीं करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है।
9. क्रोध नहीं करने से मन स्थिर रहता है।
10. क्रोध नही करने वाले व्यक्ति हर जगह आदर पाते हैं।

(मधुर व्याख्यानी श्री सुमति मुनिजी म.सा. की डायरी से)

शुद्धि-पत्र

पृ स	अशुद्ध	शुद्ध
1	सुक्किकट्ठ	मुक्किकट्ठ।
1	घेरण	धेणू
2	मव्ये	मप्पे
2	जिरणे	जिए
2	जयमासे	जयमासे
3	विभव	वैभव
11	धर्म	अधर्म
40	अन्नत	अनत्त
41	उपभोग	उपयोग
60 64	अनमोज्ञ	अमनोज्ञ
80	सम्यक्वास	रम्यक्वास
161	स्केन्द्रिय	एकेन्द्रिय
162	अवेदी मे गु 6	5
167	पस्ति	पन्ति

मुक्तक

विपदाओं में भी तुम मुस्कराते रहे, गति रोकने वाले भी चकराते रहे।
कंटक कंटीले पथ पर चलकर के नाना, हमेशा सत्य का झण्डा फहराते रहे॥